 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

फाल्गुन-चेत, संवत नानकशाही ५३९-४०
मार्च **2008** वर्ष १ अंक ७

संपादक
सिमरजीत सिंह
एम. ए, एम. एस. सी.

सहायक संपादक
सुरिंदर सिंह निमाणा
एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बीएड.

चंदा

प्रति कापी	३ रुपये
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६



फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर { वितरण विभाग **303** / संपादकीय विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय सूची

गुरबाणी विचार

गुरु सेवउ करि नमसकार ॥ आजु हमारै मंगलचार ॥
आजु हमारै महा अनंद ॥ चिंत लथी भेटे गोबिंद ॥१॥
आजु हमारै ग्रिहि बसंत ॥ गुन गाए प्रभ तुम्ह बेअंत ॥१॥रहाउ॥
आजु हमारै बने फाग ॥ प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥
होली कीनी संत सेव ॥ रंगु लागा अति लाल देव ॥२॥
मनु तनु मउलिओ अति अनूप ॥ सूकै नाही छाव धूप ॥
सगली रूती हरिआ होइ ॥ सद बसंत गुर मिले देव ॥३॥
बिरखु जमिओ है पारजात ॥ फूल लगे फल रतन भांति ॥
त्रिपति अघाने हरि गुणह गाइ ॥ जन नानक हरि हरि हरि धिआइ ॥४॥१॥ *(पन्ना ११८०)*

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी महाराज बसंत राग के इस पावन शब्द में मानव-हृदय एवं मन-अंतर तथा आत्मा में प्रभु-नाम का निवास हो जाने और इसके सद्प्रभाव के तौर पर इसमें सच्ची आत्मिक तृप्ति व आनंद का भावभीना व रसमय वर्णन बसंत ऋतु और फाल्गुन मास में खेली जाने वाली होली के प्रतीकों द्वारा करते हैं।

गुरु जी फरमान करते हैं कि मैं प्रभु से मिलाप कराने वाले गुरु द्वारा मार्गदर्शन किये जाने पर गुरु अथवा परमात्मा को नमन करता हूं। प्रभु की स्तुति-गायन करने से (जबकि हृदय में प्रभु-नाम का निवास हो चुका है) मेरे हृदय, मेरे मन-अंतर में आनंद बन गया है। यह महाआनंद है जिसे मेरी आत्मा महसूस कर रही है। जब सतिगुरु ने प्रभु से मिलाप करा दिया है तो सारा फिक्र दूर हो गया है।

गुरु जी कथन करते हैं कि आज तो मेरे हृदय रूपी घर में ही बसंत ऋतु बरत रही है। हे प्रभु! आप बेअंत हो। मैं आपके गुण गायन कर रहा हूं।

हे भाई! मेरे मन में तो आज फाल्गुन मास का उल्लासपूर्ण वातावरण बन गया है। मिलकर प्रभु-नाम जपने वाले साथी मानो होली खेल रहे हों। संत-जनों की सेवा अथवा सच्चे सतिगुरु की आदर्श आत्मिक अगुआई ने होली का माहौल बना दिया है। मन-आत्मा में प्रभु-नाम का गहरा लाल रंग चढ़ गया है। मन और तन दोनों खिल उठे हैं, अत्यंत सुंदर हो गए हैं। सांसारिक सुख और दुख, छाया और धूप दोनों का विकारी प्रभाव अब खत्म हो चुका है। सभी ऋतुओं में अब मन हरा-भरा हो रहा है क्योंकि गुरु ने सदैव रहने वाली बसंत बहार दे दी है।

गुरु जी फरमान करते हैं कि सभी मनोकामनाएं तृप्त करने वाला वृक्ष साकार हो गया है जिस पर भांति-भांति के फूल और फल दृष्टव्य हो रहे हैं। तृप्ति हो गई है। हरि-नाम का गायन करने से अब कोई सांसारिक भूख अथवा इच्छा नहीं रह गई। परमात्मा को स्मरण करने का लाभ उसके जन को मिल जाता है। ■



सिखी सिदक को कायम रखने के लिए प्रेरणास्रोत :
साका शहीद भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज सिंघ

इस संसार में सत्य और झूठ के बीच संघर्ष आदि काल से निरंतर जारी है और इसके सदैव जारी रहने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता। सत्य और झूठ के सदैव चलते संघर्ष में यह देखने में आता है कि कभी-कभी झूठ का पलड़ा बहुत भारी भी हो जाता है परंतु अंत में विजय सत्य की ही होती है। झूठ रूपी बादल सत्य रूपी सूर्य को विश्व के आकाश पर प्रकट होने से, अपने प्रकाश की किरणें पसारने से बहुत देर तक नहीं रोक सकते। सिख धर्म की तो नींव ही पूर्णत: सत्य पर आधारित रखी गई थी। सिख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी महाराज ने बेशक सुलतानपुर लोधी में सरकारी नौकरी का परित्याग करने के उपरांत ही नियमित रूप से सत्य-धर्म-प्रचार के महान मिशन की पूर्ति करने का शुभारंभ किया परंतु आप जी का इससे पूर्व का प्रारंभिक जीवन वृत्तांत भी यह स्पष्ट करता है कि गुरु जी अपने सत्य-धर्म-स्थापना के उद्देश्य को चिरकाल से सामने रखते आ रहे थे। झूठ की धारक समय की सत्तावादी और अन्य क्षेत्रों की ताकतों के विरुद्ध संघर्ष करने की घुट्टी सिखी के अनुयाइयों को सदैव मिलती रही है, अब भी मिलती है और सदा-सदा के लिए मिलती रहेगी। जुल्म-जब्र, अन्याय का दौर गुरु नानक पातशाह द्वारा स्थापित सिख धर्म की धारक नव-सृजित कौम पर इसकी स्थापना के प्रारंभिक काल में ही चलने लगा जो पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी की सन् १६०६ में मुगल बादशाह जहांगीर के शासन काल में दी गई पूर्ण शांतमय शहादत के बाद एक दम तीक्ष्ण होने लगा, जिस कारण गुरु नानक नाम लेवा सिख कौम को छठे पातशाह के पावन दिशा-निर्देश में स्वयं को शस्त्रबद्ध करना पड़ा। इसके बाद शस्त्रबद्ध संघर्ष और शांतमय संघर्ष दोनों उपरूप, समय-समय तत्कालीन परिस्थितियों और आवश्यकताओं के रूबरू चलते आए हैं।

सिख कौम के अब तक के लाखों की संख्या में हुए मान्यवर शहीदों में आज हम भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज सिंघ (पिता-पुत्र) को श्रद्धा-सुमन भेंट कर रहे हैं। इन दो इकट्ठे शहीद होने वाले शहीदों की शहीदी का वृत्तांत एक से अधिक दृष्टियों से हमें अपना धर्म पहचानने तथा कठोर से कठोर हालात में धर्म पर पहरा देने और अपना जीवन तक न्योछावर करने से पीछे न हटने की असीम प्रेरणा प्रदान करता है।

भाई सुबेग सिंघ का जीवन-काल अट्ठारहवीं सदी का है जो सिख कौम पर अब तक की कठोरतम सदी के रूप में जानी जाती है। इस सदी के मुगल शासकों और अफगान आक्रमणकारियों, दोनों ने सिख धर्म अथवा कौम को संसार के नक्शे से पूर्णत: मिटा देने के भ्रम पाले लेकिन दोनों ने झूठ उन्मुख होने के कारण मुंह की खाई।

मार्च १७३३ में समय की मुगल सरकार ने जब सिख कौम को समाप्त करने के मंद इरादों

को व्यवहार में लाकर हर तरह से देख लिया तो उसने सिख कौम के प्रतिनिधि खालसा जी के समक्ष नवाबी का प्रस्ताव रखने का ख्याल किया तथा इस ख्याल को आजमाने में हाकिमों ने भाई सुबेग सिंघ की सेवाएं लीं।

भाई सुबेग सिंघ जिला लाहौर के गांव जंबर के रहने वाले थे। वे एक साधन-सम्पन्न जमींदार थे तथा साथ-साथ सरकारी ठेकेदार भी थे। भाई साहिब न केवल सिखी स्वरूप में ही परिपक्व थे बल्कि गुरु के सिखों के साथ आपकी जान-पहचान तथा मेल-मिलाप भी था। शासक वर्ग इस तथ्य से अनभिज्ञ न था। यही कारण था कि शासक-प्रशासक वर्ग ने खालसा जी को नवाबी की पेशकश पहुंचाने के लिए भाई सुबेग सिंघ के माध्यम का चयन किया।

भाई साहिब ने इस मिशन को मुख्य रूप से इसलिए स्वीकार किया कि इस तरह सिख कौम पर सरकारी दमन-चक्र रुक जाएगा। भाई साहिब को इस मिशन की पूर्ति में पहले चरण में अपने ही भाइयों की ओर से भी कुछ-एक मुश्किलें पेश आईं जो उन्होंने सिख पंथ की संस्था का पूर्णत: सत्कार करते हुए दूर करने में सफलता हासिल की। यहां तक कि उन्होंने सरकारी होने के आधार पर अपने पर लगे आरोप के कारण से खालसा जी द्वारा लगाई तनखाह (धार्मिक सजा) भी पूर्ण श्रद्धा भाव के साथ स्वीकार की।

गुरु का खालसा यह भी कहता था कि हमें तो नवाबी गुरु पातशाह से, अकाल पुरख वाहिगुरु से पावन दात के रूप में प्राप्त होनी ही है, यह मुगल कौन होते हैं हमें नवाबी देने वाले? परंतु भाई सुबेग सिंघ ने जिस नम्रता, जिस विवेक और समय की परिस्थितियों का एहसास कराते हुए खालसा जी को यह नवाबी स्वीकार करने की विनती की और उसे स्वीकार करने के लिए धीरे-धीरे खालसा जी की सर्वसम्मति हो ही गई। नवाबी किसको दें? गुरु का कोई खालसा नवाबी लेने को तैयार न था। उपस्थित सिखों में दीवान दरबारा सिंघ, जो माननीय शख्सियत के रूप में विख्यात थे उन्होंने स्वयं नवाबी लेने से स्पष्ट इंकार कर दिया तथा और भी कइयों को आजमाया गया परंतु किसी ने इसे न स्वीकारा। फिर उस समय संगत में पंखे की सेवा कर रहे स. कपूर सिंघ फैज़लपुरिया को यह नवाबी लेने के लिए कहा गया तो गुरु के सच्चे सिख ने कहा कि यह नवाबी लेने को तो मेरा दिल भी नहीं चाहता परंतु चलो यदि खालसा यह बख्शिश करता है तो गुरु का निमाणा सिख हाजिर है, लेकिन मेरी एक शर्त है कि पहले नवाबी के चिंन्ह के तौर पर आई सनद और खिलत को पांच सिंघों के चरणों के साथ छुहाकर पावन कर लो। इस प्रकार गुरु का नाम लेवा निमाणा सिख, सिख पंथ में नवाब कपूर सिंघ के नाम से विख्यात हुआ। नवाब कपूर सिंघ ने इस अवसर पर संगत की सेवा करते रहने की शर्त भी मनवा ली और वे सदैव सेवा में रत रहे।

उस युग में काज़ियों का बहुत बोलबाला था। वे किसी भी ऊंची योग्यता वाले शख्स को गैर-मुस्लिम वर्ग में न रहने देना चाहते थे। भाई सुबेग सिंघ जी का ऊंची योग्यता वाला सपुत्र भाई शाहबाज सिंघ इसी कट्टरवादी नीति के घेराव में घेर लिया गया। जब काजी द्वारा उसे मुसलमान बनाने की बात की गई तो भाई शाहबाज सिंघ ने स्पष्ट इंकार कर दिया। इस प्रश्न पर समस्त मुस्लिम शासक-प्रशासक वर्ग भाई सुबेग सिंघ के भी विरुद्ध हो गया। उनकी हकूमत

के प्रति गत समय की सभी सेवाएं सर्वथा ही भुला दी गईं। इस प्रकार भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज सिंघ, दोनों पिता-पुत्र चरखड़ियों पर चढ़ाकर शहीद कर दिये गए। जब तक चरखड़ियां चलती रहीं दोनों 'वाहिगुरु-वाहिगुरु अकाल-अकाल' का स्वर बुलंद करते रहे। इस ऐतिहासिक साके को सिख पंथ अपनी नित्य-प्रतिदिन की अरदास में दोहराता अथवा उल्लेख में लाता है। भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज सिंघ की यह शहादत हमें अपने धर्म अथवा कर्त्तव्य पर कायम रह कर हरेक कठिन से कठिन परिस्थिति का सब्र-सिदक के साथ सामना करने की प्रेरणा देती है। यह ऐतिहासिक साका उन सिख भाइयों को विशेष प्रेरणा देता प्रतीत होता है जो सबब से सरकारी विभागों में कार्यरत हैं। वह यह कि हमको किसी भी सूरत में अपने धर्म, अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं होना चाहिए। हमारा व्यवसाय जो भी है वह हमारे धर्मपारायण होने के मार्ग में कदापि बाधा न बने। धर्म सर्वोपरि रहे! हम अकाल पुरख परमात्मा की भै-भावनी में रहें! हम सही सच्चे गुरमुख बनें! हमारा मुख सांसारिक सुख-सम्पदा की ओर न हो! हमारी सर्वप्रथम प्रमुखता गुरु-हुक्मों को समझने तथा व्यवहार में लाने की हो! ■

FORM IV

१.	प्रकाशित करने का स्थान	:	कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
२.	प्रकाशित करने का समय	:	प्रत्येक माह की पहली तारीख
३.	मुद्रक का नाम	:	स. दलमेघ सिंघ
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
४.	प्रकाशक का नाम	:	स. दलमेघ सिंघ
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
५.	संपादक का नाम	:	स. सिमरजीत सिंघ
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	संपादक, गुरमति ज्ञान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
६.	मालिक	:	शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर

मैं सिमरजीत सिंघ घोषणा करता हूं कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी अनुसार पूर्णतः सही है।

तारीख-०१/०३/०८

हस्ताक्षर/-

(सिमरजीत सिंघ)

संपादक, गुरमति ज्ञान।

होला महल्ला

*-डॉ. नवरत्न कपूर**

होली का नामकरण और पौराणिक प्रसंग : बिक्रम चांद्र वर्ष के अनुसार ही हिन्दुओं के अधिकतर त्योहार मनाए जाते हैं। इसी के फाल्गुन महीने के शुक्लपक्ष की पूर्णिमा को मनाए जाने वाले त्योहार को 'होली' अथवा 'होलिकोत्सव' के नाम से अभिहित किया जाता है। फाल्गुन मास के अंतिम दिन मनाए जाने के कारण भारत के कुछ भागों में इसे 'फाग' या 'फागुली' भी पुकारा जाता है।

फाल्गुन मास के अंतिम दिन भारत के अनेक प्रांतों में होली जलाने की प्रथा है और इसका मूल स्रोत भारतीय पुराणों में से ढूँढा गया है। तदानुसार ईश्वर-भक्त प्रहलाद बाल्यावस्था में ही प्रभु-नाम में सदैव रत रहते थे। उनके पिता हिरण्यकश्यपु को यह बात पसंद न आई तो पिता ने पुत्र को जलाने का निश्चय कर लिया। इस कार्य में भाई को सहयोग देने के लिए हिरण्यकश्यपु की बहन होलिका आगे बढ़ी। उसने अपने भतीजे को गोद में बैठा लिया। किन्तु जो अग्नि बालक प्रहलाद को जलाने के लिए प्रज्वलित की गई थी, उसमें उसकी बुआ होलिका जलकर खाक हो गई। ईश्वर-भक्त प्रहलाद जी इस संकट काल में भी प्रभु का नाम जपते रहे और उनका बाल तक बांका न हुआ।

"होलिका-दाह" की इसी तारीख को अधिकांश प्रांतों में सामूहिक अग्नि जलाई जाती है और अगले दिन "धुलहैंडी" को रंगों की होली खेली जाती है। "गुलाल" की धूल के कारण ही चैत्र प्रतिपदा को (होलिका दाहन से अगले दिन) मनाए जाने के कारण इस त्योहार का नाम लोक-भाषा में "धुलहैंडी" पड़ गया है[१]।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में होली का स्वरूप : पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने 'होली' के पर्याय के रूप में प्रचलित 'फाग' शब्द का भी प्रयोग करके प्रकारांतर से भक्त प्रहलाद की प्रभु-भक्ति को ही ध्यान में रखकर "होली" का सही स्वरूप संतों की सेवा तथा गुरु-भक्ति में रंगे रहने को माना है, यथा:

आजु हमारै बने फाग ॥
प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥
होली कीनी संत सेव ॥
रंगु लागा अति लाल देव ॥२॥
मनु तनु मउलिओ अति अनूप ॥
सूकै नाही छाव धूप ॥
सगली रूती हरिआ होइ ॥
सद बसंत गुर मिले देव ॥३॥ (पन्ना ११८०)

होला-महल्ला : सिख धर्म में निराकार भक्ति को सर्वोपरि माना गया है। संतों की सेवा और गुरु-भक्ति इसके प्रमुख अंग हैं। बाहरी राजनैतिक प्रभावों के कारण भक्ति में शक्ति का समावेश करने की आवश्यकता श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के पश्चात पड़ी। उनके महान सपुत्र छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने "मीरी और पीरी" नामक दो तलवारें अपनी कमर में सजाकर अपने श्रद्धालुओं को समय की नब्ज पहचानने के लिए प्रेरित किया। उनके

***c/o** #९०१, टावर संख्या डी-३, सागर दर्शन टावर्स, सेक्ट. १८, पास बीव रोड, नेरूल (नवी मुंबई)-४००७०६*

गुणवान पौत्र दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भारत में प्रचलित "धुलहैंडी" त्योहार को जो नया नाम बख्शा, वह है "होला महल्ला"।

अपने पूज्य दादा जी के "भक्ति में शक्ति" के समन्वय के अभियान को अग्रसर करने के लिए दशमेश पिता ने सन् १६९९ की वैशाखी के दिन पांच प्यारों को अमृत छकाकर खालसा पंथ की नींव श्री आनंदपुर साहिब, जिला रोपड़ (पंजाब) में रखी। वैशाखी वस्तुत: बिक्रमी सौर वर्ष का पहला दिन है। इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने होली—धुलहैंडी को भी नया नाम और स्वरूप प्रदान किया, जिसकी व्याख्या प्रसिद्ध सिख विद्वान् भाई कान्ह सिंघ नाभा ने इस प्रकार की है:-

"होला महल्ला—(संज्ञा) "हमला" और "जाय हमला"—"हल्ला" (हमला) और हल्ला (हमला) करने की जगह। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसे को शस्त्र और युद्ध-विद्या में निपुण करने के लिए यह रीति चलाई थी। मुख्य सिंघों के नियंत्रण में वे (खालसा पंथ के श्रद्धालु) दो दल बनाकर एक विशेष स्थल पर आक्रमण करें। कलगीधर पातशाह स्वयं इस मसनूई जंग का करतब देखते थे और दोनों दलों को शुभ शिक्षा देते थे और जो दल कामयाब होता था उसे दीवान (भरी सभा) में सिरोपा बख्शते थे।"[२]

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसे को युद्ध-विद्या में निपुण करने के लिए मसनूई जंग के अभ्यास का दिन ठहराया। . . . अब भी प्रधान गुरुद्वारों में महल्ले ('हलूल' की जगह; अर्थात् दौड़ने का स्थान) की रीति प्रचलित है।[३]

श्री आनंदपुर साहिब का होला महल्ला : खालसा पंथ के पवित्र स्थापना-स्थल पर होला-महल्ला श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा स्थापित परंपरा के अनुसार निरंतर वार्षिक महोत्सव के रूप में सन् १७०० ई से मनाया जा रहा है। होला महल्ला के आयोजन कीरतपुर साहिब गुरुद्वारे के सरोवर में स्नान करके शुरू हो जाते हैं। होले के मेले का मुख्य केन्द्र श्री आनंदपुर साहिब का पूरा कस्बा होता है। वहां पर तख्त श्री केशगढ़ साहिब से एक नगर कीर्तन चलता है, जिसमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब को एक पालकी में सजाकर लाया जाता है। पांच प्यारों और बाजों-गाजों के साथ नीले चोगों में सुसज्जित, ऊंचे दुमालों से विभूषित निहंग सिंघ हजारों की संख्या में इस शोभा-यात्रा में भाग लेते हैं।

निहंग सिंघ शहीदी बाग नामक परिसर में स्थित निहंगों के डेरे से गतके, भाले और तलवारों के करतब दिखाते हुए इस लोकपर्व को वीरों की होली का रंग देकर होला-महल्ला की समुचित संज्ञा प्रदान कर देते हैं। घुड़सवार निहंग-बंधु अपने शौर्यपूर्ण करतब दिखाते हुए जुलूस में सम्मिलित श्रद्धालुओं तथा आस-पास एकत्र हुए दर्शकों पर गुलाल भी फेंकते हुए चलते हैं।

निहंग सिंघ की छावनी, गुरुद्वारा आनंदगढ़ साहिब के सामने ही है। उसी दिशा से गुजर कर यह शौर्यपूर्ण शोभा यात्रा श्री आनंदपुर साहिब नामक कस्बे के मुख्य बाजारों को छूती हुई आगमपुर ग्राम में पहुंचती है। यहीं पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने सूरमा सिख श्रद्धालुओं के साथ पहली बार "होला" खेला था। गुरुद्वारा होलगढ़ साहिब की ओर बढ़ता यह जुलूस उसी तथ्य का स्मरण हर वर्ष करवाता है। गुरुद्वारा होलगढ़ साहिब के पवित्र सरोवर से सटे मैदान में घुड़सवारी, अस्त्र-शस्त्र संचालन तथा तंबू गाड़ने की प्रतियोगिताएं होती हैं।

रास्ते में पड़ने वाले गुरुद्वारा माता जीतो जी, गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब तथा गुरुद्वारा

शीशगंज साहिब नामक गुरुद्वारों के सामने भी नगर कीर्तन रुकता है। जहां नगर कीर्तन में सम्मिलित होने वाले श्रद्धालुजन पावन गुरुद्वारों में माथा टेकने जाते हैं, वहीं शोभा यात्रा के साथ-साथ चलने में असमर्थ आबाल-वृद्ध स्त्री और पुरुष निहंग सिंघों के बहादुरी भरे करतब देखकर चमत्कृत हो उठते हैं।

अन्ततः यह नगर कीर्तन पुनः तख्त श्री केशगढ़ साहिब पहुंच जाता है और लोग गुरुद्वारा साहिब में लंगर छक कर तथा आस-पास सजे मेला-बाजार से शरीर पर धारण किए जाने वाले कड़े, कंघे और पांच बाणियों के गुटके (निराकार ईश्वर की स्तुतिपरक रचनाएं) आदि खरीद कर अपने-अपने घरों की ओर विदा होते हैं। विभिन्न गुरुद्वारों से प्राप्त कड़ाह प्रसादि और मेला बाजार से खरीदी हुई धार्मिक सामाग्री वे अपने ग्राम या नगर में विद्यमान बंधु-बांधवों को होले के उपहार के रूप में भेंट करते हैं।[४]

पंजाबी के एक प्रसिद्ध कवि सरदार निहाल सिंघ ने "गुरु कीआँ लाड़लीआं फौजां" (गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्यारे सैनिक) कहलाने वाले और अपनी शौर्यपूर्ण वेश-भूषा तथा युद्ध-कला एवं प्रवीणता से लोगों को मुग्ध करने वाले निहंग सिंघों के साथ-साथ होला महल्ला के दृश्य को इस प्रकार काव्यमयी भाषा में गूँथा है:

बरछा ढाल कटारा तेगा कड़छा देगा गोला है।

छका प्रसाद सजा दसतारा अरु करदौना टोला है।

सुभट सुचाला अरु लखबाहा कलगा सिंघ सुचोला है।

अपर मुछहिरा दाढ़ा जैसे, तैसे बोला होला है ॥[५]

पाद-टिप्पणियां:-

१. डॉ. नवरत्न कपूर : उत्तर भारत के लोकपर्व—एक वैज्ञानिक विश्लेषण; पृष्ठ २५२ (उत्तर क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, पटियाला, सन् १९९९)।

२. भाई कान्ह सिंघ नाभा : गुरु शबद रतनाकर—महानकोश, पृष्ठ २११ (भाषा विभाग, पंजाब; पटियाला; सन् १९६०)।

३. उपर्युक्त, पृष्ठ ६९९।

४. डॉ. नवरत्न कपूर : उत्तर भारत के लोक पर्व—एक वैज्ञानिक विश्लेषण, पृष्ठ २६२।

५. भाई कान्ह सिंघ नाभा : गुरु शबद रतनाकर : महान कोश, पृष्ठ २११।

कविता

आपने रक्षा की देश-कौम के सम्मान की

सिखों ने पीड़ित धर्म की रक्षा हेतु, बहुत बड़ा सहयोग किया।
नाम-सुमिरन में रत संत तो थे पहले से ही
आत्म-रक्षा हेतु बने वे सैनिक, और सैनिक बनने का संदेश दिया।
सिखों ने मानवता की रक्षा हेतु, स्वयं हंस-हंस शीश कटाये।
मानव की रक्षा हेतु स्वयं ढाल बन गए।
किन शब्दों में करें प्रशंसा आपकी? आपने रक्षा की देश-कौम के सम्मान की।
कोई कभी भुला नहीं सकेगा एहसान, आपके सहयोग और कुर्बानी का।
सिख कौम है रक्षक, देश-कौम के सम्मान की।

-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, C/O अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

विलक्षण सिख उत्सव
होला महल्ला

*-स. ऊधम सिंघ**

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा सृजित सिख पंथ विश्व में अपनी अलग पहचान रखता है। दसों गुरु साहिबान ने इस पंथ रूपी महल को संपूर्ण करने में अपने-अपने समय में योगदान डाला। गुरु साहिबान ने जहां सिख पंथ को विलक्षण केंद्रीय धर्म-स्थान श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर बख्शा, विलक्षण धर्म-ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब बख्शा, उससे पूर्व इस धर्म व पंथ के धारक सिखों को एक नई निराली गुरमति विचारधारा और गुरमति जीवन-युक्ति भी प्रदान की। गुरु साहिब सिख पंथ को पूर्णतः सत्य-उन्मुख निराले पंथ के रूप में विकसित करना चाहते थे इस कारण उन्होंने उनको विलक्षण पर्व और त्यौहार देकर भी कृतार्थ किया। होला महल्ला का त्यौहार सिख पंथ को दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महान बख्शिश है।

होले महल्ले की अपनी विलक्षण पहचान है। आप जी ने रंगों और खुशियों के इस त्यौहार को उसारू और चढ़दी कला वाले ढंग से, होली के अगले दिन श्री आनंदपुर साहिब में होले महल्ले के रूप में मनाने की रीति को चलाया जो अब तक उसी रीति से मनाया जा रहा है।

पुरातन कहानी के अनुसार होली का संबंध हिरणकश्यप ने अपने पुत्र भक्त प्रहलाद को कष्ट पहुंचाने के लिए बनाई योजना के तहत आग में जलाने के लिए बैठाया। कहा जाता है कि हिरणकश्यप की बहन होलिका को वरदान प्राप्त था कि उसको आग जला नहीं सकती, इसलिए हिरणकश्यप ने भक्त प्रहलाद को होलिका की गोद में देकर चिता में बिठा दिया। जब आग लगाई गई तो प्रभु-परमात्मा ने अपने भक्त प्रहलाद को बचा लिया लेकिन होलिका जल कर राख हो गई। भाई गुरदास जी ने लिखा है:

घरि हरणाखस दैत दे कलरि कवलु भगतु प्रहिलादु।
जल अगनी विचि घतिआ जलै न डुबै गुर परसादि ॥ (वार १०:२)

होलिका के जल जाने के प्रतीक के तौर पर इस दिन आग जलाई जाती है।

होली के दिन लोग एक-दूसरे पर रंग फेंक कर खुशी का इज़हार करते हैं लेकिन गुरु का सिख होली के इस परंपरागत रूप को स्वीकार नहीं करता क्योंकि लोगों ने एक-दूजे पर गंदगी फेंकने, हल्ला मचाने, नशा पीने और मंदा बोलने आदि जैसी नीच हरकतों को होली का अंग समझ लिया है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसा पंथ की सृजना करने के एक वर्ष बाद खालसे के जीवन में एक नया इतिहास सृजित करते हुए और खालसे के जीवन में होली की रिवायतों को बदल कर होले महल्ले की रीति कायम की। इस रीति को और उत्साहित करने के लिए गुरु साहिब ने श्री आनंदपुर साहिब के किला होलगढ़

***vpo**-चविंडा देवी, जिला-अमृतसर।*

साहिब में शस्त्रों के अभ्यास और प्रदर्शनी के लिए किले में मेला लगाना शुरू किया। इस प्रकार होला महल्ला का पर्व मनाने का शुभारंभ हुआ।

गुरु जी की योजना के अनुरूप होली से अगले दिन खालसे के दलों के दो हिस्से किए गए। एक हिस्सा होलगढ़ के ऊपर कब्जा करके मोर्चा लगाकर बैठ गया और दूसरा दल उस पर शस्तबद्ध होकर चढ़ा। पहले दस्ते के कपड़े सफेद रंग के थे और हमला करने वाला दूसरा दसता केसरी रंग में था। दोनों दस्तों में आपस में लड़ाई हुई जो एक सैनिक अभियान था। इस अभियान में केसरी रंग वाले खालसा पंथ के जवानों ने किले पर कब्जा कर लिया और दूसरा दस्ता हार गया। यह सब कुछ गुरु साहिब आप खुद शामिल होकर देख रहे थे। इस सैनिक अभियान का मकसद खालसा पंथ का सैनिक अभ्यास कराना और जुल्म के विरुद्ध जालिम का डट कर सामना करना तथा जंगी तैयारियों के साथ दुश्मन को हार का मजा चखाना था। गुरु जी ने अपने खालसे को युद्ध के लिए सदैव तैयार रहने के लिए सतर्क किया। यूं तो सिपाहियों में नित्य-प्रतिदिन ही अभ्यास की आवश्यकता होती है और गुरु जी की आदर्श अगुआई में गुरु के सिख शूरवीर नित्य अभ्यास किया करते थे परंतु वर्ष में एक विशेष दिन ही होले महल्ले के अवसर पर समूह सिख शूरवीरों के सामूहिक अभ्यास को होले महल्ले के रूप में निश्चित करके गुरु जी ने नवसृजित खालसा पंथ में अधिक से अधिक हर्षोल्लास का संचार करना यकीनी बनाया।

दशम पातशाह का होले महल्ले जैसे पवित्र त्योहार को मनाने का मनोरथ अनोखे ढंग से जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा है। भारतीय समाज में दबी-कुचली लोकाई को शूरवीरता निर्भयता और सांझीवालता के सिद्धांतों को उनके जीवन में कामय करना और धर्म की रक्षा के लिए सच्चे-सुच्चे उसूलों को जीवन में धारण करना, सच की रक्षा करना और बदी के विरुद्ध लड़ना है।

दशमेश पिता की ओर से होले महल्ले की जो बख्शिश नानक-नाम लेवा सिखों को प्रदान की गई आज उसकी मूल भावना को वर्तमान और भविष्य के लिए बरकरार रखने की बहुत आवश्यकता महसूस हो रही है। सिख परिवारों से संबंधित सिखी स्वरूप वाले नौजवानों को होले महल्ले की सिख परंपरा के बारे में विशेष रूप में बताया जाना समय की आवश्यकता भी है और मांग भी। सिख परिवारों से संबंधित सभी नौजवानों को स्वयं भी होले महल्ले की महान परंपरा के धारक बनने के लिए आगे कदम बढ़ाने चाहिए। यह पर्व वास्तव में मुख्यत: इन्हीं का पर्व है। यदि हम गुरु के सिख कहलवाते हैं तो हम सभी को दशमेश पिता जी की अद्वितीय बख्शिशों को अपने धन्य भाग समझ कर स्वीकार करना और उन्हें अपने जीवन ढंग का अटूट हिस्सा बनाना चाहिए। इसी में हम सबका हित और सरबत्त का भला निहित है। ■

आइए! श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के ३०० वर्षीय गुरगद्दी दिवस पर गुरबाणी व गुरमति अनुसार जीवन-यापन करने का संकल्प लें।

सिख धर्म की महान औरतें

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

सिख धर्म की महान औरतों की बात करने लगें तो सर्वप्रथम माता त्रिपता जी का नाम आता है जो श्री गुरु नानक देव जी की जी माता जी थीं। अगर सिख धर्म की बंसावली की बात शुरू की जाए तो माता त्रिपता जी का नाम जगत-गुरु से पहले आता है। श्री गुरु नानक देव जी की उच्च आध्यात्यिक स्थिति को पहचानने वाली दूसरी महान औरत उनकी बड़ी बहन बेबे नानकी जी थीं। सुलतानपुर लोधी में श्री गुरु नानक देव जी की वेईं नदी वाली साखी में जब गुरु जी तीन दिन तक आलोप रहे तो लोगों ने समझा कि वे वेईं नदी में डूब गये हैं, मगर अपने भाई श्री गुरु नानक देव जी को प्रभु-रूप समझने वाली बेबे नानकी जी ने लोगों से कहा-"जो डूबे हुए लोगों को बचाने के लिए इस संसार में आया है, वो भला नदी के पानी में डूब सकता है?"

अकाल पुरख ने पुरुष और औरत को बराबर के अधिकार दिए हैं। जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जहां पर औरत ने अवसर मिलने पर पुरुष के मुकाबले कमजोरी दिखाई हो। वास्तव में सिख धर्म ही एक ऐसा धर्म है जिसमें औरत और पुरुष को बराबरता प्रदान की गई है। माता त्रिपता जी और बेबे नानकी जी के पश्चात तीसरी महान औरत हैं माता खीवी जी, जो दूसरे गुरु श्री गुरु अंगद देव जी के महिल (सुपत्नी) थीं। माता खीवी जी ऐसी सौभाग्यशाली औरत हैं जिनका नाम 'धुर की बाणी' अर्थात श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी आता है:

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली ॥
(पन्ना ९६७)

श्री गुरु अंगद देव जी की महान सपुत्री बीबी अमरो जी की प्रेरणा से ही श्री गुरु अमरदास जी को गुरु-ज्ञान की सूझ हुई थी। बीबी अमरो जी की प्रेरणा करके ही एक सिख सिखी कमाने के पश्चात 'गुरु-पदवी' को प्राप्त कर गया।

सिख इतिहास में यह प्रसिद्ध है कि श्री गुरु अमरदास जी की सपुत्री बीबी भानी जी सदा ही 'गुरु-भाणे' में रहने वाली, गुरु-भाणे को मीठा कर मानने वाली थीं। हर समय 'भला जी', 'भाणा जी', 'भूली जी' कहने वाली महान औरत बीबी भानी जी का नाम गुरु-सपुत्री, गुरु-पत्नी और गुरु-माता के रूप में आदरणीय है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दादी जी, श्री गुरु तेग बहादर जी की माता जी और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के महिल माता नानकी जी की महानता भी किसी से छिपी नहीं है।

श्री गुरु तेग बहादर जी के महिल माता गुजरी जी की गुरु-घर के प्रति और मानव-कल्याण के प्रति सेवा, प्यार और बलिदान का उदाहरण पूरे विश्व भर में कहीं नहीं मिलता। आप जी को गुरु-महिल होने के साथ-साथ गुरु-

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१*

बहू और गुरु-माता होने का भी सम्मान प्राप्त है। सरबंसदानी गुरु जी के माता जी भी तो सरबंसदानी ही हैं। पहली सिख शहीद औरत माता गुजरी जी ही हैं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के बाद सिख पंथ की सफल बागडोर संभालने की जिम्मेवारी माता सुंदरी जी ने ही निभाई थी। माता साहिब कौर जी को समूह खालसा पंथ की माता होने का महान स्थान प्राप्त है। इससे बढ़कर और सत्कार क्या हो सकता है? माता भागो जी जैसी पूरे विश्व में और कोई साहसी औरत नहीं हुई, जिसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को बेदावा देकर आए सिंघों की खुद अगुवाई की। हाथों में तलवार पकड़ कर, घोड़े पर सवार होकर, मुक्तसर की जंग में शूरवीरता के ऐसे जलवे दिखाए कि दुश्मन भी अश-अश कर उठे। बेदावी सिंघों का बेदावा फड़वाने वाली महान औरत माता भागो जी ही तो थीं। इसके बाद बीबी दीप कौर, बीबी हरशरण कौर जैसी और भी बहुत सी महान औरतें हैं। वास्तव में सिख इतिहास में औरतों का महान योगदान रहा है।

सिख धर्म में औरत को पुरुष के बराबर का दर्जा प्राप्त है। औरत को पुरुष के समान अमृत छकाया जाता है। दोनों के लिए रहित मर्यादा भी एक ही है। औरत भी मर्दों की तरह सिर पर दसतार (केसकी) सजा सकती है। वह कीर्तन, पाठ, कथा आदि भी कर सकती है। सिख औरत को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ करने का पूरा अधिकार है। पति की मृत्यु के बाद वो पुनर्विवाह कर सकती है। सिख रहित मर्यादा में कुड़ी-मार अथवा लड़की को जान से मार देने वाले के साथ सभी प्रकार के व्यवहार करने की मनाही है।

श्री गुरु नानक देव जी विश्व के पहले महान आगू हैं जिन्होंने औरत की परंपरागत त्रासदी के विरुद्ध जोरदार आवाज उठाई। उन्होंने समकालीन राजाओं, योगियों, मौलाणों और धार्मिक कट्टरपंथियों को कहा कि अपनी जन्मदाती (मां) को क्यों मारते हो? श्री गुरु अमरदास जी ने औरतों को पर्दे की रस्म का त्याग करने को कहा। विधवा विवाह का समर्थन करके, सती-प्रथा की मंदी रस्म का खात्मा करने का उपदेश किया। श्री गुरु अमरदास जी ने औरत का पुरुष के बराबर सत्कार बहाल किया। धर्म प्रचार के लिए २२ मंजियों में से दो मंजियां स्त्री प्रचारकों के लिए स्थापित की गईं। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भी नारी-सत्कार बहाल रखने का उपदेश किया। इस प्रकार समूचे गुरमति मार्ग में स्त्री को पुरुष के बराबर का सम्मान प्राप्त है। औरत-सत्कार के प्रति श्री गुरु ग्रंथ साहिब में बहुत सी सामग्री सम्मिलित है। सिख इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान पाने वाली साहसी और धार्मिक औरतों की सूची बहुत लम्बी है। यह एक पूरे शोध-प्रबंध का विषय है। नि:संदेह सिख इतिहास में औरतों का महान योगदान है। ■

जरूरी विनती

'गुरमति ज्ञान' में पावन गुरबाणी की पंक्तियां शामिल होती हैं, अत: पढ़ने के पश्चात या तो इसे संभाल कर रखें या किसी स्कूल, कालेज, गुरुद्वारा या गांव के पुस्तकालय में पहुंचा दें।

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन

*-डॉ. निर्मल कौशिक**

भारतीय संस्कृति के संरक्षक एवं पोषक श्री गुरु तेग बहादर जी ने मानव जीवन के इतिहास में एक ऐसा अद्वितीय कार्य किया है जिसका उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने अपने युग के शासक वर्ग की नृशंस एवं मानवता-विरोधी नीतियों को कुचलने के लिए आत्म-बलिदान तक दे डाला। यह कार्य इतना सहज नहीं है। कोई ब्रह्मज्ञानी साधक ही इस स्थिति को पा सकता है। जो मनुष्य 'पर में निज' को देखता है वह मानवता के शिखर को पा लेता है। उसके लिए पूरा विश्व अपना होता है। वह लोक-प्रतिनिधि बन कर अकेले ही दुष्वृत्तियों से जूझ पड़ता है और सत्य सदैव उसके पक्ष में होता है। गुरु-शिष्य परम्परा के नवम गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी मानवता की साकार प्रतिमा थे। उनमें ईश्वरीय निष्ठा के साथ समता-भाव, करुणा, प्रेम, सहानुभूति, त्याग और बलिदान जैसे अनेक मानवीय गुण विद्यमान थे। श्री गुरु तेग बहादर जी के गुणों को समन्वित करते हुए डॉ. शमीर सिंघ कहते हैं- "शस्त्र और शास्त्र का, संघर्ष और वैराग्य का, लौकिकता और आलौकिकता का, रणनीति और आचार नीति का, राजनीति और कूटनीति का, संग्रह और त्याग का, आत्मलीनता और विश्व के प्रति समर्पण का ऐसा संयोग मध्ययुगीन साहित्य एवं इतिहास में बिरला है। यही कारण है कि श्री गुरु तेग बहादर जी, गुरु के गौरव और तेग की बहादुरी की रक्षा एक साथ करने में सफल सिद्ध हुए हैं।"

नवमेश गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी का युग मानव मूल्यों के ह्रास का युग था। इस समय औरंगजेब का शासन था। उसने हिंदोस्तान की मूल संस्कृति को समूल नष्ट करने की ठान ली थी। उसने बड़े-बड़े शिक्षा केन्द्रों, मठों, मंदिरों को नष्ट कर दिया, लाखों निर्दोष लोगों को मौत के घाट उतार दिया। उस समय के कश्मीर के गवर्नर इफ़तिकार खां के अत्याचारों से पीड़ित कुछ ब्राह्मणों ने आनंदपुर साहिब में आकर गुरु जी को अपनी व्यथा सुनाई और रक्षा के लिए अनुनय-विनय की। इस घटना ने गुरु जी की आत्मा को झकझोर दिया और गुरु जी आत्मोत्सर्ग के लिए तत्पर हो गए।

गुरु जी नश्वर शरीर के रहस्य को भली-भांति समझते थे। वे आत्मा की अमरता को पहचानते थे, इसीलिए वे निर्भीक थे। वे समत्व भाव से जीवन-यापन करने पर अधिक बल देते थे। उन्होंने सुख, दुख, निन्दा-स्तुति, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि को समदृष्टि से देखने की प्रेरणा दी है:

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ॥ (पन्ना ६३३)

अर्थात् जो निन्दा-स्तुति को समान समझने वाला और मननशील है अर्थात् ईश्वर के स्वरूप का निरन्तर मनन करने वाला है एवं जिस-किस प्रकार से भी शरीर का निर्वाह होने में

**१६३, आदर्श नगर, पुरानी छावनी रोड, फरीदकोट—१५१२०३*

सदा ही संतुष्ट है और रहने के स्थान में ममता से हित है वह स्थिर बुद्धिमान, भक्तिमान पुरुष मेरे को प्रिय है। श्री गुरु तेग बाहदर जी अपनी बाणी में फरमान करते हैं:

उसतति निंदा दोऊ परहरि हरि कीरति उरि आनो ॥
जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख भगवानो ॥ (पन्ना ११८६)

गुरु जी जानते थे कि इस संसार में सब कुछ नश्वर है। बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी स्थाई रूप से यहां नहीं रह सकते। यहां कुछ भी स्थिर नहीं है। यह संसार एक स्वप्न के समान है जो आँख खुलते ही (चेतना के आते ही) नष्ट हो जाता है:

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥
(पन्ना १४२९)

गुरु जी के इस सांसारिक नश्वरता के संकल्प ने भी उन्हें शारीरिक मोह-त्याग की ओर प्रेरित किया। उनकी ईश्वरीय निष्ठा, आत्मा की अमरता और देह की नश्वरता उन्हें निर्भीक बलिदानी बनाने में सहायक सिद्ध हुई।

धैर्य गुरु जी के महान व्यक्तित्व का अनन्य गुण है। वे मुसीबत में अडिग और अविचल रहते थे। दिल्ली में अत्याचारी शासन के करिंदों द्वारा उनकी आंखों के सामने ही भाई दयाला जी को खौलते तेल की देग में उबाला गया, भाई मतीदास जी को आरे से चीरा गया, भाई सतीदास जी को रुई लपेटकर जिंदा जला दिया गया, मगर वे विचलित नहीं हुए, बल्कि उनके अंदर आत्म-बलिदान की भावना और तीव्र हुई। गुरु जी के मन की प्रबलता को लालच दुर्बल नहीं बना सका। औरंगजेब ने उनके समक्ष तीन शर्तें—'इस्लाम धर्म कबूल करना, कोई करामात दिखाना अथवा मृत्यु का आलिंगन' रखीं।

गुरु जी ने जुल्म के सामने झुकने से साफ इन्कार कर दिया। उन्होंने सहिष्णुता और धीरता को अपने जीवन में एक अलंकार की भांति संजोया।

जो किसी दुष्कर्म में अपने आप को प्रवृत्त नहीं करते हैं वास्तव में धैर्यवान पुरुष वही होते हैं। गुरु जी ने अत्याचारी शासन के सामने झुकने की अपेक्षा मृत्यु को गले लगाना ही श्रेयस्कर समझा।

गुरु जी ने भय-युक्त जीवन को निकृष्ट माना। उन्होंने मनुष्य को निर्भीक जीवन जीने की प्रेरणा दी। उनकी बाणी में सबको अपने जैसा समझने और अपना बनाने की प्रेरणा है। जब सभी अपनत्व भाव से अपने होंगे, कोई दूसरा होगा ही नहीं तो भय किससे होगा? गुरु जी फरमान करते हैं:

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

न किसी को भयभीत करो और न ही किसी से भयभीत हो। कहते हैं कि मरने के भय से ही मारने का विचार उत्पन्न होता है। अगर देह की नश्वरता और आत्मा की अमरता का ज्ञान हो तो फिर मरने का भय स्वत: नष्ट हो जाता है। आज शस्त्रों की दौड़ भी तो भय का ही परिणाम है। अपने भय को मिटाने के लिए हम दूसरों को भयभीत करते हैं, जो मूलत: गलत नीति है। गुरु जी ने भय के निराकरण का मात्र उपाय बताया है हरि का सुमिरन। वास्तव में मोक्ष भी अभय-पद ही है। यही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। किन्तु इस अभय-पद की प्राप्ति भी उसी महान आत्मा को हो सकती है

जिसने आत्म तत्त्व को जान लिया हो। गुरु जी ने सतत् साधना से सृष्टि और स्रष्टा के रहस्य को पा लिया था। वे जानते थे कि *'जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ॥'* अत: आपने अभय-पद प्रदान करने वाले उस प्रभु के नाम को अपना लिया। इसी नाम का आधार लेकर वे औरंगजेब जैसे अत्याचारी के साथ अति सीमित साधनों के होते भी जूझ पड़े। उनके दृढ़ निश्चय और आस्था के सामने औरंगजेब का जब्र-जुल्म फीका पड़ गया, वह उन्हें झुका नहीं सका। गुरु जी ने न तो इस्लाम धर्म ही स्वीकार किया और न ही कोई करामात दिखाई। वे अंतरयामी थे। उन्होंने ईश्वर के 'हुक्म' का साक्षात्कार कर लिया था। उन्होंने लोभ, मोह, सुख-दुख, मान-अपमान, हर्ष-विषाद को समभाव जानकर इनसे ऊपर उठकर 'निर्भय-पद' पा लिया था। अत: वे मृत्यु से भी भयभीत न हुए और न ही किसी को भयभीत किया। वे चाहते तो अपनी आध्यात्मिक चेतना के बल पर उसे कई करामातें दिखाकर भयभीत कर सकते थे, मगर गुरु जी का दृष्टिकोण ही अलग था। वे शक्ति का प्रयोग किसी सार्थक कार्य के लिए करना उपयोगी मानते थे। अपनी शक्ति को उन्होंने समूचे राष्ट्र की रक्षा के लिए बलिदान देकर सार्थक किया।

आज वैज्ञानिक प्रगति के इस युग में मनुष्य आत्म-रक्षा हेतु हिंसावादी हो गया है, सुरक्षित रहने के लिए अस्त्रों-शस्त्रों का संग्रह करना पड़ रहा है। विश्व-शान्ति की स्थापना युद्धों के माध्यम से की जा रही है। एक देश दूसरे को धमका रहा है। सारा विश्व भयभीत हो रहा है। परमाणु दौड़ निरंतर बढ़ रही है। वास्तव में देखा जाए तो यह सब मानव की अपनी दुर्बलताओं का ही दुष्परिणाम है। मानव अपनी दुर्बलता को छुपाने के लिए दूसरे को भयभीत करना चाहता है। वह अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके दूसरे को नष्ट कर देना चाहता है ताकि उसका विरोध करने वाला कोई न हो। वह अपने 'अहम्' के बूते पर दूसरे के अस्तित्व को मिटा देना चाहता है। मगर वह नहीं जानता कि उसका भी तो अंत होना है। मृत्यु तो निश्चित ही है। मानव की सबसे बड़ी विडम्बना यही है कि वह यह सब देखते हुए भी कि आज तक कोई भी मृत्यु से बच नहीं पाया है, फिर भी वह दूसरे का विनाश ही चाहता है। वह जिससे अपना बचाव करना चाहता है उसे नष्ट कर देता है। अगर आज पूरा विश्व गुरु जी के बताए मार्ग पर चले, न किसी से डरे और न किसी को डराए, तो आज विश्व-शांति का सपना पल भर में ही साकार हो सकता है। मगर मनुष्य अपने डर को दूर कैसे करे? उसके लिए गुरु जी ने एक ही मार्ग बताया है:

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ॥ *(पन्ना ६३३)*

मगर यह काम हर मनुष्य के वश की बात नहीं है इसके लिए आस्था और निष्ठा की आवश्यकता होती है। मन की चंचलता को नियन्त्रित करना पड़ता है इसीलिए गुरु जी अपनी बाणी में बार-बार अपने मन की दृष्वृत्तियों की शिकायत करते हुए फरमान करते हैं:

-मन रे कउनु कुमति तै लीनी ॥ (पन्ना ६३१)

यही एक मार्ग है दुर्बलता को दूर कर शक्ति संग्रह करने का। जिसके पास शक्ति है वह किसी से क्यों डरेगा? जो सब प्राणियों में ईश्वर का स्वरूप देखता है वह उन्हें कैसे डरा सकता है? वह तो उनके आगे नतमस्तक होता

है। यही भावना मानव को महामानव बना सकती है।

श्री गुरु तेग बहादर जी का समूचा जीवन एक साधक का जीवन है। उन्हें कोई भी लौकिक समृद्धि या आकर्षण साधना-पथ से विचलित नहीं कर सका। उनकी बाणी उनकी अनुभूति पर आधारित है। वे सांसारिकता के मोहपाश से दूर रहने का संदेश देते हैं। उनकी कथनी और करनी समान है। उन्होंने जो कुछ कहा, कर दिखाया। उनका व्यक्तित्व मानव जीवन के सभी बाधक तत्वों से रहित है। उन्होंने मानव को काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि विकारों से दूर रह कर ईश्वर की आराधना पर बल दिया है। वे जानते थे कि जब तक मोह-माया रूपी अज्ञान का अंधकार मन पर छाया रहेगा तब तक प्रभु के दर्शन नहीं हो सकते:

माई मै किहि बिधि लखउ गुसाई ॥
महा मोह अगिआनि तिमरि मो मनु रहिओ उरझाई ॥ *(पन्ना ६३२)*

अगर मन शुद्ध हो तो प्रभु-कृपा से मनुष्य उन सभी सद्गुणों को पा लेता है जो मानवता के लिए कल्याणकारी होते हैं। मानव सत्य, प्रेम, त्याग, क्षमा, और उदारता जैसे गुणों को धारण कर उदात्त हो जाता है, वह सत्य को पाने में सक्षम हो जाता है। इतना सक्षम कि दूसरों के बहकावे में आ ही नहीं सकता, किसी भी प्रकार का लोभ या भय उसे विचलित नहीं कर पाते। साधक एक ऐसी अवस्था को पा लेता है जो न तो अपनी स्तुति सुनना चाहता है और न ही किसी की निन्दा करना चाहता है। वह सुख में हर्षित नहीं होता है न ही दुख में शोकाकुल। वह लोहे और सोने को समान समझता है। शत्रु और मित्र को भी समदृष्टि से देखता है। सुखमनी साहिब में श्री गुरु अरजन देव जी ने ऐसे पुरुष को 'ब्रह्मज्ञानी' कहा है:

ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि ॥
ब्रहम गिआनी कै नाही अभिमान ॥ (पन्ना २७२)

वास्तव में देखा जाए तो मोक्ष, निर्वाण, मुक्ति जो कुछ भी कहें वास्तव में इस सांसारिकता से पिंड छुड़ाने के बाद की स्थिति का ही उपाय है। जब तक प्राणी इस संसार में रहता है उसे मृत्यु का भय बना रहता है। शक्तिशाली जीव अपनी शक्ति से कमजोरों को मारना गौरव समझते हैं। इसी भावना से हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ती है। अगर इस भावना को मन पर काबू पाते हुए नियन्त्रित कर लिया जाए और अपनी शक्ति को दूसरों को मारने की अपेक्षा दूसरों की रक्षा के लिए लगा दिया जाए तो पूरा विश्व एक कुटुम्ब की तरह लगेगा। फिर तो शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पी सकेंगे। अस्त्रों-शस्त्रों की दौड़ स्वत: समाप्त हो जाएगी। जो धन रक्षा के लिए अपव्यय हो रहा है वही निर्धनों के भरण-पोषण के काम आ सकेगा। यह तभी सम्भव है अगर हम श्री गुरु तेग बहादर जी के बताए अभय-पद प्राप्ति के मार्ग का अनुसरण करें। आज के संतप्त हृदयी मानव को गुरु जी का अमर संदेश ही सम्बल प्रदान कर सकता है। आज हिंसा और द्वेष को समाप्त कर विश्व-शांति की स्थापना का यही एक मात्र उपाय है जो गुरु जी ने वर्षों पूर्व लक्ष्य-भ्रष्ट मानव को बताया था। उनका भय-निवृत्ति का यह नुस्खा आज भी उतना ही अचूक है जितना उनके अपने युग में था। नि:संदेह वे युगनायक थे। ■

सिख धर्म के प्रमुख सिद्धांत, विशेषताएं तथा जीवन मूल्य

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

भूमिका

सिख धर्म विश्व के सभी धर्मों में नवीनतम है। यह धर्म श्री गुरु नानक देव जी के धरती पर आगमन से आरंभ हुआ। इस धर्म ने जगत के प्रमुख धर्मों में अपना स्थान बनाया है। संसार के सभी बड़े देशों में इस धर्म के मानने वालों को देखा जा सकता है। सिख धर्म एक-ईश्वरवादी धर्म है तथा इसमें मूर्ति अथवा देवी-देवताओं की पूजा को कोई महत्व नहीं दिया जाता। सिख धर्म के धर्म-ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में से नये दौर की सभी चुनौतियों का हल खोजा जा सकता है।

दस गुरु साहिबान

१. श्री गुरु नानक देव जी (१४६९-१५३९ ई): सिख धर्म का आरंभ श्री गुरु नानक देव जी के आगमन से हुआ। गुरु जी का जन्म १४६९ ई में तलवंडी नामक गांव में हुआ जो कि आजकल पाकिस्तान में स्थित है और ननकाणा साहिब के नाम से जाना जाता है। गुरु जी के पिता का नाम भाई महिता कालू तथा माता का नाम माता तृप्ता जी था। इनकी बहन का नाम बेबे नानकी जी था जो सुल्तानपुर में रहती थीं। गुरु जी भी उस समय अपनी मोदीखाने की नौकरी के कारण सुलतानपुर में ही रहते थे कि एक दिन वहीं वेईं नदी में स्नान करने गये और परमात्मा का प्रकाश अनुभव किया। आप जी ने यह ऐलान कर दिया, *'ना को हिंदू न मुसलमान।'* गुरु जी देश-विदेश में परमात्मा के इस संदेश का प्रचार करने हेतु उदासियों (यात्राओं) पर चले गये और लगभग बाईस वर्ष इसी कार्य में लगे रहे। श्री गुरु नानक देव जी ने अपना अंतिम समय रावी नदी के किनारे स्थापित किये एक गांव करतारपुर में गुजारा और सिखी-सिद्धांतों का प्रचार किया।

२. श्री गुरु अंगद देव जी (१५०४-१५५२ ई) : श्री गुरु अंगद देव जी का जन्म १५०४ ई में 'मत्ते दी सरां' मे हुआ। इसे आजकल 'सराय नागा' कहा जाता है और यह गांव पंजाब के जिला मुक्तसर में स्थित है। इनको पहले भाई लहणा जी कहा जाता था और ऐसा माना जाता है कि ये आरंभिक जीवन-काल में देवी के पुजारी थे। भाई लहणा जी एक सिख से श्री गुरु नानक देव जी की बाणी सुन कर गुरु जी से मिलने करतारपुर आये और वहीं रह गये। गुरु जी के प्रभाव से देवी की पूजा छोड़ दी तथा आज्ञाकारी सिख बने। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने पुत्रों तथा सिखों की परीक्षा ली और भाई लहणा जी को सफल पाया। गुरु जी ने भाई लहणा जी को गुरगद्दी देकर 'गुरु अंगद देव' के नाम से स्थापित किया। श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित संस्थानों को आगे बढ़ाया तथा गुरमुखी लिपि को व्यवस्थित किया।

३. श्री गुरु अमरदास जी (१४७९-१५७४ ई) : श्री गुरु अमरदास जी सिखों के तीसरे गुरु

**धर्म अध्ययन विभाग, गुरु गोबिंद सिंघ भवन, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२।*

थे। इनका जन्म १४७९ ई में अमृतसर जिले के बासरके गांव में हुआ। हर साल गंगा-स्नान के लिये जाते परंतु शांति न मिली। एक दिन बीबी अमरो जी, जो कि श्री गुरु अंगद देव जी की बेटी थी तथा इनके भतीजे के साथ ब्याही हुई थी, के मुख से श्री गुरु नानक देव जी की बाणी सुन कर शांति मिली और श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा में खडूर साहिब आ गये। गुरु-घर की सेवा के बाद गुरगद्दी की बख्शिश हुई। बादशाह अकबर इनके दर्शन करने आये तथा प्रचलित रीति के अनुसार पहले लंगर में भोजन किया फिर गुरु जी के दर्शन किये। गुरु जी द्वारा प्रचलित इस रीति को *'पहले पंगत पाछे संगत'* के नाम से जाना जाता है। श्री गुरु अमरदास जी ने 'मंजी-प्रथा' का आरंभ करके २२ मंजियों की स्थापना की।

४. श्री गुरु रामदास जी (१५३४-१५८१ ई): श्री गुरु रामदास जी का जन्म १५३४ ई में चूना मंडी लाहौर में हुआ। इनको पहले भाई जेठा जी कहा जाता था। बचपन में आप जी श्री गुरु अमरदास जी के पास ही गोइंदवाल में सेवा करते थे। इनकी सेवा, ईमानदारी तथा गुरु-भक्ति से प्रभावित होकर श्री गुरु अमरदास जी ने अपनी सपुत्री बीबी भानी जी का विवाह इनके साथ कर दिया। गुरगद्दी मिलने पर इन्होंने अमृतसर की स्थापना का कार्य आरंभ किया तथा 'मसंद-प्रथा' आरंभ की। मसंद दूर-दराज की संगत को गुरु से जोड़ने का कार्य करते थे।

५. श्री गुरु अरजन देव जी (१५६३-१६०६ ई) : श्री गुरु रामदास जी के तीन सपुत्र थे- प्रिथी चंद, महादेव और (गुरु) अरजन देव जी। आपका जन्म १५६३ ई में गोइंदवाल में हुआ। श्री गुरु अरजन देव जी अकाल पुरख की बंदगी तथा पिता-गुरु की सेवा को अपना धर्म मानते थे। वे पिता की आज्ञा का पालन करने को सदैव तत्पर रहते। श्री गुरु रामदास जी ने इनको योग्य जान कर इन्हें गुरगद्दी प्रदान की। श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब की नींव एक सूफी फकीर साईं मीयां मीर जी से रखवाई। उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की आदि बीड़ का सम्पादन किया, दसवंध की प्रथा (अपनी मेहनत की कमाई का दसवां भाग गुरु को अर्पित करना) का आरंभ किया। इनके समय में सिखी का जो विकास हुआ उसी से कुछ मुस्लिम कट्टरपंथी ईर्ष्या करने लगे तथा बादशाह जहांगीर के कान भरने लगे। १६०६ ई में गुरु जी को लाहौर में शहीद कर दिया गया।

६. श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी (१५९५-१६४४ ई) : आपका जन्म १५९५ ई में श्री अमृतसर के वडाली गांव में हुआ। इसे अब 'गुरु की वडाली' कहा जाता है। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी गुरगद्दी पर बैठे। इन्होंने मीरी-पीरी की दो तलवारें पहनीं, १६०६ ई में श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर के सामने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापति की, हक सच की स्थापित हेतु चार युद्ध किये और सभी में विजय प्राप्त की। सिख आपको 'सच्चा पातशाह' (धार्मिक शहंशाह) भी कहते हैं।

७. श्री गुरु हरिराय साहिब जी (१६३०-१६६१ ई): ये श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के पौत्र थे। इनका जन्म श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी के घर कीरतपुर साहिब में हुआ। २२०० घुड़सवार आपके पास हमेशा रहते थे। आप अमन-शांति की नीति को धारण करने को प्राथमिकता देते थे।

८. श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी (१६५६-१६६४ ई) : आपका जन्म १६५६ ई में

कीरतपुर साहिब में हुआ। आपके पिता का नाम श्री गुरु हरिराय साहिब जी तथा माता का नाम माता क्रिशन कौर था। आपको पांच वर्ष की आयु में गुरगद्दी मिली। आपको बाला-प्रीतम भी कहा जाता है। बाल अवस्था के कारण दिल्ली जाते समय रास्ते में एक ब्राह्मण ने आपकी बौद्धिक तथा आध्यात्मिक शक्ति पर संदेह किया तो आपने बुरा नहीं माना बल्कि छज्जू नाम के झीवर से गीता के अर्थ करवा कर उसकी शंका दूर की। जब आप दिल्ली में पहुंचे तो वहां चेचक की बीमारी फैली हुई थी। सिखों द्वारा दिये जाने वाले दसवंध के पैसे को गुरु जी ने रोगियों की सहायता के लिये खर्च किया। वहीं गुरु जी इसी बीमारी का प्रहार हो जाने के कारण ज्योति जोति समा गये।

९. श्री गुरु तेग बहादर जी (१६२१-१६७५ ई) : आप श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के सबसे छोटे सपुत्र थे। आपका जन्म श्री अमृतसर में सन् १६२१ में हुआ। जब आपको गुरगद्दी मिली उस समय आप 'बकाला' में थे। आपसे जुड़ने के कारण इस नगर का नाम 'बाबा बकाला' प्रसिद्ध हुआ। भाई मक्खन शाह नाम के पक्के श्रद्धालु सिख ने बकाला पहुंच कर आपको खोज निकाला। आप सिखी-प्रचार के लिये आसाम तक गये। जब वहां पर पता चला कि बादशाह औरंगजेब पंजाब तथा कश्मीर के लोगों पर जुल्म कर रहा है तो शीघ्र ही पंजाब आकर लोगों को साहस तथा शांति बनाये रखने की प्रेरणा दी। पं. कृपाराम के नेतृत्व में कश्मीरी पंडितों का एक जत्था गुरु जी के पास आनंदपुर आया तथा बादशाह के जुल्मों से निजात दिलाने की प्रार्थना की। गुरु जी ने कहा कि अगर कोई महान व्यक्ति इस जुल्म के विरोध में अपना बलिदान दे तो आम जनता भी जुल्म का सामना कर पाएगी तथा जुल्म का सार्वजनिक विरोध आरंभ हो जाएगा। उनके नौ वर्ष के सपुत्र बाल गोबिंद राय भी वहां मौजूद थे। उन्होंने कहा कि इस समय आपसे महान व्यक्ति कौन हो सकता है? श्री गुरु तेग बहादर जी ने पंडितों को सहायता का वचन दिया। बादशाह को संदेश मिला कि यदि गुरु जी इस्लाम कबूल करेंगे तो ये सब अपने आप मुसलमान हो जायेंगे। गुरु जी को उनके तीन साथियों सहित पकड़ कर दिल्ली ले जाया गया तथा इस्लाम कबूल करने अथवा करामात दिखलाने को कहा गया। गुरु जी के न मानने पर उनको उनके साथियों समेत शहीद कर दिया गया।

१०. श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी (१६६६-१७०८ ई) : आप जी श्री गुरु तेग बहादर जी के सपुत्र थे। आपका जन्म पटना साहिब में १६६६ ई में हुआ। उस समय श्री गुरु तेग बहादर जी आसाम में प्रचार के लिए गये हुए थे। पिता की शहादत के पश्चात आप नौ वर्ष की आयु में गुरगद्दी पर स्थापित हुए। आपने जुल्म से टक्कर लेने की तैयारी की तथा इस कार्य के लिये सैनिक प्रशिक्षण आरंभ किया; सिखों में वीर-रस पैदा करने के लिए साहित्य की रचना की तथा खालसे की सृजना करके आम लोगों को जुल्मों से निजात दिलाने का कार्य किया। जितने भी युद्ध किये सब में फतह हासिल की। युद्धों के पश्चात तलवंडी साबो, जिला बठिंडा में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु तेग बहादर जी की बाणी शामिल करके भाई मनी सिंघ जी की सेवाएं लेते हुए पावन दमदमी स्वरूप का संपादन किया तथा दक्षिण में नांदेड़ के स्थान पर इस पावन ग्रंथ को गुरगद्दी सौंप कर ज्योति-जोत समा गये।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब : श्री गुरु अरजन देव

जी ने सबसे पहले इस पावन ग्रंथ का सम्पादन 'आदि ग्रंथ' के रूप में किया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस पावन ग्रंथ को तलवंडी साबो में संपूर्ण करके नांदेड़ में गुरगद्दी सौंपी। यह ग्रंथ गुरु के रूप में सिखों का सदैव ही मार्गदर्शन करता आया है और करता रहेगा। इस ग्रंथ में छह गुरु साहिबान, पंद्रह भक्तों, ग्यारह भट्टों तथा चार सिखों की बाणी दर्ज है। इनके नाम इस प्रकार हैं:-

१. गुरु साहिबान—श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी, श्री गुरु तेग बहादर जी।
२. भक्त साहिबान—भक्त जैदेव जी, भक्त नामदेव जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त परमानंद जी, भक्त सधना जी, भक्त बेणी जी, भक्त रामानंद जी, भक्त धन्ना जी, भक्त पीपा जी, भक्त सैण जी, भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, बाबा फरीद जी, भक्त भीखन जी, भक्त सूरदास जी।
३. भट्ट साहिबान—भट्ट कल्ल जी, भट्ट सल्ल जी, भट्ट बल्ल जी, भट्ट भल्ल जी, भट्ट कीरत जी, भट्ट जालप जी, भट्ट भिक्खा जी, भट्ट गयंद जी, भट्ट मथुरा जी, भट्ट हरिवंश जी।
४. सिख—बाबा सुंदर जी, भाई मरदाना जी, भाई सत्ता जी तथा भाई बलवंड जी।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के १४३० पन्ने हैं। पावन बाणी ३१ रागों में दर्ज है। कुछ बाणियां राग-मुक्त भी हैं। रागों में अंकित प्रत्येक शब्द का गायन रागों के अनुसार होता है। पावन बाणीकार गुरु साहिबान के नाम को बाणी के साथ दर्ज नहीं किया है परंतु उनकी पहचान के लिए महला १, २, ३, ४, ५ तथा ९ का प्रयोग किया गया है। इसके सहज पाठ तथा श्री अखंड पाठ साहिब जी की प्रथा भी प्रचलित है। सिख परिवारों में चार संस्कार प्रमुख रूप से किये जाते हैं—जन्म के बाद नामकरण संस्कार, अमृत संस्कार, आनंद कारज (विवाह) तथा मृतक संस्कार। इन सभी संस्कारों के समय श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का विशेष महत्व रहता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का आरंभ मूल-मंत्र से होता है जिसे समूह श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सार भी माना जाता है। मूल-मंत्र में परमात्मा के गुणों का उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार है:-

१ —परमात्मा एक है।
ओअंकार —वह सारी सृष्टि में एकरस व्यापक है।
सति नामु —उसका नाम सत्य है।
करता —वह सृष्टि का कर्ता है।
निरभउ —वह भय-मुक्त है अथवा उसे किसी का डर नहीं।
निरवैरु —उसका किसी के साथ वैर नहीं।
अकाल मूरति—वह काल अथवा मृत्यु से मुक्त है।
अजूनी —वह मनुष्य तथा अन्य जीवों की तरह जन्म नहीं लेता।
सैभं —उसको किसी ने पैदा नहीं किया बल्कि उसका प्रकाश अपने आप से है।
गुर प्रसादि —उपरोक्त गुणों वाला अकाल पुरख परमात्मा गुरु की कृपा से प्राप्त होता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के मूल सिद्धांत

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में तीन मूल सिद्धांतों का वर्णन किया गया है—नाम जपना, किरत करना, वंड छकना। ये तीनों सिद्धांत समाज को सही रूप में आगे ले जाने हेतु जरूरी माने गये हैं।

१. नाम जपना : नाम के जाप का मूल भाव परमात्मा के सर्वव्यापक अस्तित्व को महसूस

करना तथा मन को आध्यात्मिक विकास की दिशा में ले जाना है। गुरबाणी बताती है कि सृष्टि में जो भी वस्तुएं अथवा जीव मौजूद हैं वे सब परमात्मा के नाम से प्रकट हुए हैं:

जेता कीता तेता नाउ ॥
विणु नावै नाही को थाउ ॥ (पन्ना ४)

सामाजिक कार्य करते समय मन दुनियावी विषयों में लिप्त रहता है तथा उसे शुद्ध रखने की जरूरत पड़ती है। नाम-सुमिरन व्यक्ति को प्रभु-केंद्रित करके मन को सही दिशा में ले जाने का कार्य करता है। संक्षेप में कहा जाये तो परमात्मा को सदैव मन में याद रखना, उसके गुणों का वर्णन करना, उसको सृष्टि में सभी जगह महसूस करना तथा मन में आनंद की अवस्था को धारण करने को ही नाम जपना कहते हैं।

२. किरत करना (हाथों द्वारा काम करना): नाम का जाप इसलिये किया जाता है कि मन परमात्मा से जुड़ा रहे तथा किरत इसलिये की जाती है कि मन में सामाजिक कार्यों के प्रति रुचि पैदा हो तथा जीवन-निर्वाह का कोई साधन कायम रह सके। नाम-सुमिरन, मन को रोग-मुक्त करता है तथा शारीरिक कार्य शरीर को तंदरुस्त रखने में सहायक होते हैं। किरत करना इसलिये भी जरूरी है ताकि मन में किसी दूसरे की वस्तु छीनने की रुचि पैदा न हो बल्कि स्वयं उस वस्तु को मेहनत तथा ईमानदारी की कमाई से हासिल करने की सामर्थ्य उत्पन्न हो। भक्त कबीर जी फरमान करते हैं:

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु ॥
हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु ॥
(पन्ना १३७४)

३. वंड छकना (बांट कर खाना) : यह सरबत्त (सभी) के भले का सिद्धांत है। व्यक्ति जिस समाज में रहता है वहां अमीर-गरीब दोनों तरह के लोग देखने को मिल जाते हैं। समाज के इन दोनों वर्गों में पैदा हुई दरार को कुछ कम किया जाये इसलिये सिख धर्म में वंड छकने का सिद्धांत प्रचलित किया गया। सिख समाज में गुरु साहिबान द्वारा आरंभ की 'दसवंध' की प्रथा बांट कर खाने के सिद्धांत को मजबूत करती है। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है:

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

आधुनिक समाज जैसे-जैसे विकास की दिशा में जा रहा है वैसे-वैसे अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब हो रहा है। विकसित देश विकासशील देशों पर विभिन्न प्रकार से पाबंदियां लगा कर उन पर अपने नियम थोप रहे हैं ताकि विकासशील देशों को अपनी मंडी बना कर अपना माल बेच सकें। विकास के इस नये दौर ने हर व्यक्ति को स्व-केंद्रित करने का काम किया है। श्री गुरु नानक देव जी की विचारधारा से मानव भलाई का जो संदेश पैदा हुआ उसे *'गरीब का मुँह गुरु की गोलक'* कहा गया। इसी विचारधारा के अंतर्गत धर्मशालाओं की स्थापना की गयी, लंगर की प्रथा का आरंभ हुआ, विद्या की प्राप्ति के लिये यत्न किये गये, अस्पताल खोले गये आदि।

इस तरह ये तीनों सिद्धांत गुरमति का मूलाधार हैं। कई बार हमें यह सिद्धांत एक-दूसरे से अलग दिखाई देते हैं, पर ऐसा नहीं है। ये तीनों सिद्धांत एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि तीनों को एक-दूसरे के संदर्भ में रख कर देखा जायेगा तभी श्री गुरु ग्रंथ साहिब की मूल विचारधारा के सही परिप्रेक्ष्य को समझ पायेंगे। ये तीनों सिद्धांत मिलकर आदर्श समाज की सृजना का कार्य करते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संदेश : श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना मध्यकालीन समय में हुई। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में वर्णित संदेश उस समय की सभी सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों को सामने रख कर दिया गया है। उनमें से ही कुछेक का वर्णन यहां पर किया जा रहा है तथा साथ ही साथ गुरु साहिबान द्वारा उन परिस्थितियों पर किए गए फरमानों (टिप्पणियां) को भी शामिल किया गया है। ये फरमान तत्कालीन तथा वर्तमान समाज की परिस्थितियों को हल करने हेतु आज भी प्रासंगिक हैं।

१. जात-पात का बोलबाला : श्री गुरु नानक देव जी के समय भारतीय समाज दो प्रमुख भागों में विभक्त था—हिन्दू और मुसलमान। पुन: हिन्दू समाज चार वर्णों में बंटा हुआ था—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इन चारों जातियों के अपने-अपने वर्ण अनुसार कर्म निर्धारित थे और जो व्यक्ति जिस वर्ण से संबंध रखता था उसकी सन्तान भी उसी वर्ण की ही मानी जाती थी। इस तरह एक वर्ण के लोग दूसरे वर्ण में प्रवेश नहीं कर सकते थे। मुसलमानों में भी दो प्रमुख वर्ग देखने को मिलते थे--अशरफ और अजलफ। अशरफ उच्च जाति तथा अजलफ निम्न जाति के मुसलमान माने जाते थे। इस तरह दोनों प्रमुख धर्म जहां आपस में उलझे हुए थे वहां उनकी अपने धर्म में जात-पात और ऊंच-नीच के आधार पर खींचातानी भी चलती रहती थी। श्री गुरु नानक देव जी ने समाज में पैदा हुई ऐसी भावना से दूर रहने का आदेश देते हुए कहा:

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥
(पन्ना १५)

२. पुरोहित वर्ग की प्रधानता : भारत की धरती के दोनों प्रमुख धर्मों में पुरोहित वर्ग का बोलबाला था। पुरोहित आम लोगों के भोलेपन का फायदा उठाकर उनके विश्वासों पर चोट करके उन्हें दोनों हाथों से लूटते थे। हिन्दू धर्म के पुरोहित वर्ग के प्रति भक्त कबीर जी अपने मनोभाव प्रकट करते हुए फरमान करते हैं:

गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे पाइनि तग ॥
गली जिन्हा जपमालीआ लोटे हथि निबग ॥
ओइ हरि के संत न आखीअहि बानारसि के ठग ॥
(पन्ना ४७६)

इसी तरह मुसलमानों के तथाकथित धार्मिक वर्ग पर टिप्पणी करते हुए बाबा फरीद जी फरमान करते हैं:

फरीदा कंनि मुसला सूफु गलि दिलि काती गुड़ु वाति ॥
बाहरि दिसै चानणा दिलि अंधिआरी राति ॥
(पन्ना १३८०)

उपरोक्त दोनों भक्त साहिबान ने समाज के दोनों प्रमुख धर्मों के तथाकथित उच्च वर्ग पर तीक्ष्ण व्यंग्य करते हुए कहा कि यह उच्च वर्ग समाज में अपना स्वार्थ पूरा करने हेतु बाहरी दिखावा तो पूरी तरह कर रहा है पर धार्मिक मूल्यों से पूरी तरह रिक्त है। इन हालातों में समाज के सभी वर्गों तथा कौमों के लोग एकजुट होकर कैसे रह सकते हैं? गुरु साहिबान ने समाज में धार्मिक कार्यों के लिये पुरोहित वर्ग से दूर रहने का आदेश दिया तथा ऐसे कार्य करने के लिये सिखों को प्रोत्साहित किया ताकि किसी भी वर्ग में से सिख बनने वाले लोग अगर ऐसे धार्मिक कार्य खुद ही करेंगे तो एक तरफ पुरोहित वर्ग से मुक्ति मिलेगी तथा दूसरी तरफ

समाज में प्रेम तथा भाईचारे की भावना को बल मिलेगा।

३. स्त्री का स्थान : भारतीय समाज में स्त्री की दशा दयनीय थी। हिन्दू समाज में स्त्री घर से बाहर नहीं जा सकती थी, यदि जरूरत पड़ने पर उसे बाहर जाना भी पड़ता तो पति, पुत्र और पिता में से किसी एक पुरुष का साथ होना जरूरी था। हिन्दू समाज में सती-प्रथा भी प्रचलित थी जिसके अनुसार अधिकतर स्त्रियां अपने पति की चिता के साथ ही जल कर भस्म हो जाती थीं। हिन्दू समाज की इन कुरीतियों के विरोध में जैन तथा बौद्ध धर्म सामने आए जिन्होंने स्त्री को संघ में तो स्थान दे दिया, पर कुछ वर्गों को छोड़कर, ज्यादातर संप्रदायों ने स्त्री को मुक्ति का अधिकारी नहीं माना। इस्लाम में धार्मिक आधार पर स्त्री तथा मर्द में समानता का भाव है पर सामाजिक स्तर पर मुस्लिम समाज में स्त्री के लिए पर्दा-प्रथा प्रचलित थी जो कि आज तक निरन्तर जारी है। समाज के आधे हिस्से को समानता से दूर रखने से भाईचारे की भावना कैसे कायम रह सकती है? समाज में स्त्रियों को पुरुषों के समान दर्जा दिलाने हेतु श्री गुरु नानक देव जी आगे आये। उन्होंने कहा कि जो स्त्री राजाओं, महाराजाओं तथा महापुरुषों को जन्म देती है उसे बुरा क्यों कहा जाता है?

सो किउ मंदा अखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

४. न्याय प्रबंध : न्याय प्रबंध में असंतुलन भी भाईचारे की भावना की सुदृढ़ता में बाधक है। राज्य में किसी एक धार्मिक सम्प्रदाय का बोलबाला होने के कारण दूसरे सम्प्रदाय को समानता का स्थान नहीं दिया गया। एक पक्षपाती धार्मिक सम्प्रदाय के हाथ में आया राज्य का प्रबंध धार्मिक और नैतिक मूल्यों को अनदेखा कर देता है जिससे समाज में भेदभाव की भावना उत्पन्न हो जाती है। ऐसे में धर्म की मूल भावना का हनन होता है। इस संबंध में श्री गुरु नानक देव जी फरमान करते हैं:

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥
(पन्ना १४५)

राजाओं की पक्षपाती धार्मिक वृत्ति जहां दूसरे धर्मों के नैतिक मूल्यों के विकास में रुकावट खड़ी करती है वहां पक्षपात करने वाले व्यक्ति के धर्म में भी गिरावट के स्पष्ट संकेत मिलते हैं:

काजी होइ कै बहै निआइ ॥
फेरे तसबी करे खुदाइ ॥
वढी लै कै हकु गवाए ॥
जे को पुछै ता पड़ि सुणाए ॥ (पन्ना ९५१)

पक्षपाती न्याय प्रबंध भी भाईचारे की भावना में रुकावट पैदा करके लोगों को पृथक करने का काम करता है। गुरु साहिबान कहते हैं कि जो राजा आम लोगों को न्याय नहीं दे सकता तथा राज-धर्म का पालन नहीं कर सकता उसे तख्त (राजगद्दी) पर बैठने का कोई अधिकार नहीं:

तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई ॥
(पन्ना १०८८)

५. धार्मिक असहनशीलता : भारत के दोनों प्रमुख धर्म हिन्दू-मुस्लिम धार्मिक तौर पर एक-दूसरे को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते थे। मुसलमान राज्य-प्रबंध का हिस्सा होने के कारण हिन्दू धर्म को दबाने की कोशिश में लगे हुये थे। उनको उनके धार्मिक स्थलों पर जाने से रोकने के लिए नये-नये ढंग खोजे जाते थे। श्री गुरु नानक देव जी इस तथ्य को उजागर करते हुए बताते हैं कि मुसलमान शासकों ने हिन्दुओं के

मन्दिरों के आय-व्यय पर 'कर' लगाना शुरू कर दिया:

देवल देवतिआ करु लागा ऐसी कीरति चाली ॥
(पन्ना ११९१)

हिन्दू समाज भी मुसलमानों के प्रभावाधीन इस सीमा तक झुक गया कि उन्होंने मुसलमानों के रीति-रिवाजों को धारण करना शुरू कर दिया:

घरि घरि मीआ सभनां जीआं बोली अवर तुमारी ॥ (पन्ना ११९१)

इस तरह करने से अनेकता में एकता की नैतिक भावना के विपरीत धक्केशाही वाली अनैतिकता दिखाई देने लगी। श्री गुरु नानक देव जी जहां मुसलमानों को नैतिक मूल्यों की पालना करने के लिए कहते हैं, वहां हिन्दुओं के दोहरे मापदण्ड पर टिप्पणी करते हुए फरमान करते हैं:

नील वसत्र पहिरि होवहि परवाणु ॥
मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु ॥ (पन्ना ४७२)

गुरु जी फरमान करते हैं कि इन दोहरे मापदण्डों के सहारे कुछ समय तो जीवन व्यतीत किया जा सकता है पर चिरकाल तक इसे अपनाया नहीं जा सकता। भाईचारे की भावना पैदा करने के लिए जरूरी है कि मनुष्य में मन, वचन तथा कर्म में एकात्मकता हो। गुरु साहिबान ने सिखों को इसी मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में निहित जीवन-मूल्य :

(१) निन्दा-त्याग : निन्दा मन में ईर्ष्या पैदा करने तथा समाज में वैर-विरोध बढ़ाने का काम करती है। श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं कि बहुत से मनुष्य निन्दा में जल रहे हैं। निन्दा करने वाले मनुष्य आत्मिक स्तर पर विकास नहीं कर सकते और हमेशा व्यर्थ के बंधनों में बंधे रहते हैं:

निंदा करि करि पचहि घनेरे ॥
मिरतक फास गलै सिरि पैरे ॥ (पन्ना ८०६)

निन्दा को सिख धर्म में आत्मिक गिरावट की निशानी माना गया है। यह किसी एक मनुष्य को ही कुमार्ग पर नहीं ले जाती बल्कि सारे सामाजिक वातावरण को भी प्रभावित करती है। निन्दा करने वाला मनुष्य ईर्ष्या तथा द्वेष का शिकार रहता है जिससे भाईचारे में वैमनस्य बढ़ने के साथ ही नैतिक मूल्यों में गिरावट आने लगती है। निन्दक व्यक्ति समाज में अनैतिकता तथा परायेपन की भावना पैदा कर देता है, जिससे समाज में विश्वास की भावना को गहरा आघात लगता है तथा मनुष्यता की एकता को खतरा पैदा हो जाता है।

श्री गुरु नानक देव जी ने समाज के नैतिक मूल्यों की नींव सच्चाई पर रखी तथा मनुष्य को 'सचियारा' बनने का आदेश दिया। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा सृजित समाज 'सरम' तथा 'धरम' के मूल्यों के पुनरुत्थान के लिए उठाया गया एक कदम था। श्री गुरु नानक देव जी के समय हिन्दू धर्म के लोग मुसलमानों को 'मलेछ' कह कर निन्दित किया करते थे तथा मुसलमान हिन्दुओं की निन्दा करने के लिए 'काफिर' शब्द का प्रयोग करते थे। सिख समाज में इन दोनों शब्दों की कोई मान्यता नहीं क्योंकि ये दोनों शब्द समाज में नफरत तथा भेदभाव फैलाने का काम कर रहे थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा खालसे की सृजना के समय निर्धारित की गई मर्यादा का उल्लेख करते हुए भाई नंद लाल जी कहते हैं:

खालसा सोई जो निंदा तिआगे।
(तनखाहनामा, ४४)

सिख धर्म के अनुसार निन्दा-त्याग से ही आध्यात्मिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है तथा

मनुष्य के मन में द्वैत-भाव नष्ट होकर भाईचारे की भावना का विकास होता है।

(२) वैर-विरोध की भावना का त्याग : वैर-विरोध की भावना ईर्ष्या से उत्पन्न होती है। ईर्ष्या-युक्त मनुष्य न तो अपना भला कर सकता है तथा न ही परोपकार कर सकता है। ईर्ष्या-युक्त मनुष्य अपना जन्म व्यर्थ गंवा रहा होता है। श्री गुरु अरजन देव जी कथन करते हैं कि दुनिया के रस, झगड़े, ईर्ष्या तथा माया का अहंकार मनुष्य के आध्यात्मिक पतन के द्योतक हैं :

सुआद बाद ईरख मद माइआ ॥
इन संगि लागि रतन जनमु गवाइआ ॥
(पन्ना ७४१)

मनुष्य-जीवन के पांच बड़े विकार माने गए हैं--काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार। ये पांच विकार मनुष्य के जीवन में अशान्ति पैदा कर देते हैं तथा मनुष्य को मनुष्यता से दूर करके वैर-विरोध की भावना उत्पन्न कर देते हैं। सिख जीवन का उद्देश्य परमानंद की प्राप्ति माना गया है जिसका श्री गुरु नानक देव जी की पावन बाणी 'जपु जी' में आयी पांच अवस्थाओं (धर्म खंड, ज्ञान खंड, सरम खंड, कर्म खंड तथा सच खंड) में किया गया है। इन अवस्थाओं में मनुष्य सांसारिक विषय-विकारों से दूर परमात्मा के मार्ग पर चलता है। इस अवस्था को परम-शान्ति की अवस्था भी कहते हैं। श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि दुनिया के सारे ज्ञानवान व्यक्ति इस बात से सहमत हैं कि वैर-विरोध उत्पन्न करने वाले विकारों से ऊपर उठ कर ही मनुष्य परम सत्य की प्राप्ति कर सकता है:

सांती विचि कार कमावणी सा खसमु पाए थाइ ॥
नानक कामि क्रोधि किनै न पाइओ पुछहु गिआनी जाइ ॥ *(पन्ना ५५१)*

वैर-विरोध की भावना कैसे दूर हो सकती है इसका उत्तर देते हुए बाबा फरीद जी कहते हैं कि किसी से भी वैर-भावना रखने से पहले अपने अन्तरमन में दृष्टिपात करनी चाहिए कि कहीं वे बुराइयां हमारे अन्दर विद्यमान तो नहीं जिनसे हम वैर कर रहे हैं। ईसा मसीह ने एक विधवा को पत्थर मार रहे लोगों को कहा कि इसे पहला पत्थर वह मारे जिसने कभी पाप न किया हो। दूसरों को दुख पहुंचाने की इच्छा से बढ़ाये जा रहे वैर-विरोध को तभी समाप्त किया जा सकता है यदि बाबा फरीद जी के इन बहुमूल्य वचनों को मन में पूरी तरह से उतारा जा सके:

फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥
(पन्ना १३७८)

इस तरह मनुष्य वैर-विरोध की भावना को समाप्त करके, प्रेम तथा भाईचारे की भावना उत्पन्न कर सकता है।

मनुष्य के भाईचारे को इकट्ठा रखने के साथ-साथ मनुष्य की भलाई पर केन्द्रित हैं। यहां दो प्रमुख सिद्धांतों का वर्णन किया जा रहा है— (१) परोपकार (२) सेवा

(१) परोपकार : परोपकार सिखी का उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु भलाई के काम किये जाते हैं जिससे समाज में से ऊंच-नीच तथा भेदभाव को दूर किया जा सके।

सिख धर्म के अनुसार समस्त जीवों का कर्त्ता एक परमात्मा है तथा उसी ने सभी जीवों को पैदा करके उन्हें जीवन-शक्ति प्रदान की है। जब परमात्मा द्वारा दी गयी जीवन-शक्ति में बाधा आती है तो जीव को दुख पहुंचता है।

सृष्टि के समस्त जीव, जीवन-शक्ति में उत्पन्न होने वाली बाधा से मुक्त रहें, इसलिए उनका भला मांगा जाता है। परमात्मा सर्वशक्तिमान है, इसलिए समस्त जीवों की भलाई की कामना परमात्मा से की जाती है:

जीअ जंत सभि सुखि बसे सभ कै मनि लोच ॥
परउपकारु नित चितवते नाही कछु पोच ॥
(पन्ना ८१५)

सिख इतिहास में भाई कन्हैया जी का उदाहरण हम सबके समक्ष है जिन्होंने गुरु जी द्वारा दर्शाये परोपकार के मार्ग को आत्मसात् करते हुए अपने-पराये में अन्तर किए बगैर आनंदपुर साहिब के युद्ध में गुरु जी के विरुद्ध युद्ध करने आयी मुगल फौज के घायल सिपाहियों को भी पानी पिलाया। भाई कन्हैया जी के इस कार्य से प्रसन्न होकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भाई साहिब को पानी पिलाने के साथ-साथ मरहम पट्टी करने का भी आदेश दिया। आजकल यह काम रैडक्रास संस्था करती है, पर देखा जाए तो इसकी नींव भाई कन्हैया जी ने ही रखी थी। इसी तरह से मिसलों के समय (१८वीं शताब्दी) में वैशाखी के दिन श्री अकाल तख्त साहिब, श्री अमृतसर में सिखों की सभा में कसूर के कुछ ब्राह्मण आए, जिन्होंने उसमान खां अफगान के खिलाफ शिकायत की कि वह साथ आए एक ब्राह्मण की पत्नी को जबरदस्ती उठा के ले गया है। 'तरुणा दल' जत्थेबंदी का स. हरी सिंघ भंगी दुखी ब्राह्मणों की सहायता के लिए आगे आया। उसने स. चढ़त सिंघ की सहायता से कसूर पर हमला कर दिया तथा उसमान खां समेत उसके पांच सौ साथियों को मौत के घाट उतारकर ब्राह्मण स्त्री को रिहा करवा के उसके पति को सौंप दिया। इस युद्ध में सिखों का भी बहुत नुकसान हुआ पर उन्होंने गुरु साहिबान द्वारा बताये 'परोपकार' तथा 'सरबत्त' के भले के मार्ग पर चलने को प्राथमिकता दी।

परोपकार से ही दया, संयम, धर्म, धैर्य, नम्रता आदि गुणों का विकास होता है। गुरु साहिबान द्वारा लंगर-प्रथा का आरंभ, अस्पतालों, धर्मशालाओं आदि का निर्माण सरबत्त के भले तथा परोपकार के सूचक हैं, जहां प्रत्येक गरीब तथा जरूरतमंद को सहायता दी जाती है।

(२) सेवा : सेवा सिखी का आदर्श है जो कि नैतिक दर्शन के मुख्य आधारों में शामिल है। दुनिया में सेवा के कई रूप देखने को मिलते हैं, जैसे घर में माता-पिता, बहन-भाइयों तथा दूसरे सगे-संबंधियों की सेवा; नौकरी में अपने मालिक की सेवा, समाज में दीन-दुखियों, गरीबों, जरूरतमंदों की सेवा, आध्यात्मिक मार्गदर्शन के लिए गुरु की सेवा आदि। इनमें से गुरु की सेवा के साथ-साथ गरीबों तथा जरूरतमंदों की सेवा को उत्तम माना गया है। गरीब की सेवा को गुरु की सेवा के समान मानते हुए कहा गया है-*'गरीब का मुंह गुरु की गोलक।'*

सेवा का अर्थ है किसी दूसरे की जिम्मेवारी अपने ऊपर ले लेना तथा दूसरे की चिंता को कम करने का प्रयत्न करना। यदि कोई रोगी मिले तो यथासभंव इलाज कराना, अगर सड़क पर कोई नेत्रहीन मिले तो उसे सड़क पार कराना, अगर धन की कमी के कारण जो पढ़ न सके उसको पढ़ाने में सहायता करनी के अलावा, आज गंभीर रोगों के इलाज के लिए खूनदान तथा मरणोपरांत शरीर के अंगों के दान को भी उत्तम सेवा माना जाता है। इस प्रकार जब सिख सामाजिक सेवा के साथ-साथ अपने धर्मस्थल पर जाता है तो वहां भी सेवा के विभिन्न रूप देखने को मिलते हैं, जैसे सिख

धर्म तथा समाज को प्रफुल्लित करने के लिए दसवंध (अपनी कमाई का दसवां भाग) की सेवा, संगत में जाकर पानी पिलाने, दरियां झाड़ने, बिजली न होने पर पंखा करने तथा संगत के जूते साफ करने की सेवा, लंगर में परशादे पकाने, लंगर छकाने तथा जूठे बर्तनों की सफाई की सेवा इत्यादि। भाई गुरदास जी साधसंगत की सेवा को सब सुखों की प्राप्ति का साधन मानते हुए कहते हैं:

साधसंगति करि सेव सुख फलु पाइआ।
तपड़ु झाड़ि विछाइ धूड़ी नाइआ ।(वार २०:१०)

सेवा करने से मनुष्य के मन में उत्तम गुणों का विकास होता है जो कि समाज में प्रेम तथा भाईचारे की भावना उत्पन्न करने में योगदान देते हैं।

प्रमुख सिख संस्थान : श्री गुरु नानक देव जी ने जो विचारधारा प्रस्तुत की उसको अमल में लाने के लिये संस्थानों की स्थापना की। अमल की यह प्रक्रिया गुरु जी के करतारपुर निवास के समय ही आरंभ हो गई थी। गुरुद्वारा, लंगर तथा संगत को सिख संस्थान में प्रमुख रूप से देखा जाता है।

१. गुरुद्वारा : जहां पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश हो उसे गुरुद्वारा कहते हैं। श्री गुरु अरजन देव जी ने गुरुद्वारे की इमारत का जो नमूना पेश किया लगभग सभी गुरुद्वारों में वही माडल देखने को मिलता है। हर गुरुद्वारे के ऊपर एक गुम्बद होता है, उसके चार दरवाजे होते हैं, बाहर एक निशान साहिब तथा एक सरोवर होता है।

गुरुद्वारा साहिब में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का रोजाना प्रकाश तथा सुखासन सम्मानपूर्वक किया जाता है। गुरुद्वारे में एक विशेष स्थान पर 'मंजी' के ऊपर स्वच्छ एवं शुद्ध वस्त्र बिछाकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश करने की परंपरा है। गुरुद्वारे में मूर्ति तथा किसी अन्य वस्तु की पूजा नहीं की जा सकती। केवल वाहिगुरु (परमात्मा) की आराधना की जाती है तथा उसी की स्तुति में कीर्तन किया जा सकता है। गुरुद्वारे में कीर्तन के अतिरिक्त नित्तनेम का पाठ भी किया जाता है। नित्तनेम की पांच बाणियां हैं—जपु, जापु, त्व प्रसादि सवय्ये (स्रावग सुद्ध समूह . . .), सोदरु तथा सोहिला। कीर्तन किसी समय भी किया जा सकता है। कीर्तन केवल गुरबाणी में निर्धारित रागों के अनुसार ही किया जाना चाहिये। संगत में कीर्तन श्री गुरु ग्रंथ साहिब तथा दशम ग्रंथ की बाणी, भाई गुरदास जी द्वारा रचित वारों (जिन्हें श्री गुरु ग्रंथ साहिब की कुंजी कहा जाता है) तथा कबित सवय्यों और भाई गुरदास सिंघ जी द्वारा रचित वार ४१ और भाई नंद लाल जी की रचनाओं का हो सकता है।

हर बड़े गुरुद्वारे में एक सराय होती है जहां यात्रियों के रहने की सुविधा प्रदान की जाती है। सराय में रहने के साथ-साथ लंगर का प्रबंध भी होता है जहां यात्री भोजन करते हैं। गुरुद्वारे में संगत की उपस्थिति तथा मौसम के हिसाब से समय निर्धारित करके श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश तथा कीर्तन जारी रखा जाता है।

२. लंगर : लंगर प्रेम तथा भाईचारे की भावना का प्रतीक है जहां बिना किसी भेदभाव के सबको भोजन छकाया जाता है। लंगर प्रत्येक गुरुद्वारे का अभिन्न अंग होता है। यहां पंगत में बैठ कर भोजन किया जाता है और जिससे व्यक्ति के मन में ऊंच-नीच तथा अमीर-गरीब की भावना उत्पन्न नहीं होती।

श्री गुरु नानक देव जी ने करतारपुर में

लंगर का आरंभ किया तो लोगों में लंगर के लिए लकड़ियां, सब्जियां तथा गेहूं लाने का सेवा-भाव उत्पन्न हुआ। श्री गुरु अंगद देव जी के समय उनकी सुपत्नी माता खीवी जी लंगर की सेवा-संभाल करते थे जिसकी प्रशंसा करते हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब में फरमान है:

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली ॥
(पन्ना ९६७)

इसमें भाई बलवंड जी कह रहे हैं कि जैसे बहुत गर्मी में घने पत्तों वाले वृक्ष शरीर को ठंडक पहुंचाते हैं वैसे ही लंगर में बांटी जा रही दूध-घी वाली खीर माता खीवी जी का सम्मान बढ़ा रही है। श्री गुरु अमरदास जी के समय बादशाह अकबर गुरु जी के दर्शन करने आया तो लंगर में भोजन का सेवन करके बहुत प्रसन्न हुआ। उसने गुरु जी को लंगर के लिये जमीन-दान देने की कोशिश की पर गुरु जी ने नम्रतापूर्वक मना कर दिया, क्योंकि गुरु जी चाहते थे कि लंगर जागीर के धन से नहीं अपितु सिखों द्वारा भेंट की जाने वाली माया से चलना चाहिये। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा आरंभ की लंगर की परंपरा को उनके उत्तराधिकारियों ने आगे बढ़ाया जो कि आज तक निरंतर जारी है। देश-विदेश में जहां कहीं सुनामी, भूचाल अथवा अन्य कोई प्राकृतिक विपत्ति आती है तो सिखों द्वारा जनहित के कार्य को प्रमुख मान कर लंगर लगाया जाता है।

३. सत्संगत : जहां दो अथवा दो से ज्यादा व्यक्ति इकट्ठे होते हैं उसे संगत कहा जाता है। यह संगत अच्छे या बुरे दोनों तरह के लोगों की हो सकती है पर जो संगत गुरुद्वारे में होती है उसे सत्संगत कहा जाता है, क्योंकि वहां एकत्र होने वाली संगत अकाल पुरख की आराधना तथा सत्य-मार्ग को धारण करने वाली होती है। संगत में नेक पुरुषों के दर्शन होते हैं, जिससे जीवन को सुधारने की प्रेरणा मिलती है। जैसे चंदन के पास रहने वाले वृक्षों से चंदन की खुशबू आती है वैसे ही सत्संगत में नेक गुणों वाले व्यक्तियों के मिलाप से अच्छे गुण धारण करने का मनोबल प्राप्त होता है। श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि संतों की संगत गुरु की चटसाल (पाठशाला) है जहां सतसंगी पवित्र गुणों को धारण करते हैं:

सतसंगति सतिगुर चटसाल है जितु हरि गुण सिखा ॥ (पन्ना १३१६)

सत्संगत में अपना-पराया कोई नहीं होता, ऊंच-नीच तथा बड़े-छोटे का कोई भेदभाव नहीं होता। इस दृष्टि से सत्संगत में भाईचारे की भावना को मजबूत किया जाता है। सत्संगत में सेवा, प्रेम, नम्रता की भावना उत्पन्न होती है। गुरबाणी में पांच सद्‌गुणों तथा पांच दुर्गुणों का वर्णन किया गया है। सत, संतोष, दया, धर्म तथा धैर्य पांच सद्‌गुण माने जाते हैं और काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार को पांच दुर्गुण माना गया है। दुर्गुणों के विकार भी मनुष्य को कठोरचित्त तथा कुकर्मी बना देते हैं। गुरबाणी सद्‌गुणों को धारण करने की प्रेरणा देती है क्योंकि ये व्यक्ति को गुरमुख बनाने के पथ पर ले जाते हैं। ये सद्‌गुण सत्संगत में आसानी से दृढ़ हो सकते हैं इसलिये सत्संगत का महत्व बताया जाता है।

४. खालसा : 'खालसा' का अर्थ है शुद्ध, निर्मल, मिलावट रहित। जो जमीन सीधे बादशाह के अधिकार में होती है उसे भी खालसा कहा जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त कबीर जी द्वारा इस शब्द का प्रयोग किया गया है। खालसे को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा स्थापित आदर्श

के रूप में देखा जाता है।

१६९९ ई की १ वैशाख तिथि को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसे की स्थापना की। श्री गुरु नानक देव जी ने सत्संगत को गुरमुख पंथ धारण करने की प्रेरणा दी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सत्संगत से ही खालसे की उत्पत्ति की। इस तरह श्री गुरु नानक देव जी तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की विचारधारा में कोई अन्तर नहीं है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित संगत को ही खालसा बनाया जिसकी व्याख्या करते हुए भाई गुरदास सिंघ जी कथन करते हैं:

पीओ पाहुल खंडधार होइ जनम सुहेला।
संगति कीनी खालसा मनमुखी दुहेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥
(वार ४१:१)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने आनंदपुर में सिखों का एक बहुत बड़ा इकट्ठ किया तथा संगत में से किसी एक सिख को शीश-भेंट करने के लिये कहा। गुरु जी द्वारा तीसरी बार अपनी मांग दुहराये जाने पर लाहौर के भाई दयाराम ने आगे आकर अपना शीश भेंट करने की इच्छा व्यक्त की। गुरु जी उसे एक तम्बू में ले गये तथा खून से लिप्त कृपाण लेकर बाहर आये तथा एक और शीश की मांग की। दूसरी बार दिल्ली के भाई धर्मदास, तीसरी बार जगन्नाथ के भाई हिम्मत राय, चौथी बार द्वारिका के भाई मोहकम चंद तथा पांचवीं बार बिदर के भाई साहिब चंद आगे आये। गुरु जी सबको खालसे की पोशाक पहना कर बाहर लाये तथा 'खंडे की पाहुल' तैयार की। इसको तैयार करते समय पांच बाणियों का पाठ किया गया—जपु, जापु, त्व प्रसादि सवय्ये (स्रावग सुद्ध समूह . . .), चौपई तथा अनंदु साहिब।

जब अमृत तैयार हो गया तो गुरु जी ने पहले इन पांच सिखों को अमृत छका कर **'सिंघ'** सजाया तथा अमृत-पान के बाद इनके नाम—भाई दया सिंघ, भाई धर्म सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ, भाई मोहकम सिंघ और भाई साहिब सिंघ हो गये। फिर गुरु जी स्वयं उन पांचों से अमृत-पान करके गुरु गोबिंद राय से गुरु गोबिंद सिंघ हो गये। यह इतिहास में केवल एक मात्र घटना है जहां गुरु ने अपने सिखों (शिष्यों) से अमृत-पान करके उन्हें बराबरी का दर्जा दिया हो। गुरु जी ने सभी सिखों को अमृत-पान करा कर खालसा सज जाने की प्रेरणा की। सभी पुरुषों को अमृत छक कर नाम के पीछे **'सिंघ'** तथा महिलाओं को अपने नाम के पीछे **'कौर'** लगाने का आदेश दिया। अमृत-पान के समय पांच ककार—कछहरा, कड़ा, केस, कंघा तथा कृपाण धारण करना अनिवार्य घोषित कर दिया। खालसे को गुरु जी ने अपना ही रूप बताते हुए उन्हें चार कुरहितों (कुकर्म, निषिद्ध कर्म) से दूर रहने का आदेश दिया। चार कुरहितें इस प्रकार हैं-

१. केशों की बेअदबी।
२. कुट्ठा (मुसलमानी रीति के अनुसार बना मांस) खाना।
३. पर-स्त्री अथवा पर-पुरुष का संग करना।
४. तंबाकू का सेवन करना।

खालसे ने एक अकाल पुरख के अतिरिक्त किसी देवी-देवता की उपासना नहीं करनी, श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अलावा किसी अन्य को गुरु नहीं मानना, परोपकार के कार्यों के लिये सदैव तत्पर रहना, गरीबों तथा दबे-कुचले लोगों की सहायता करनी के अलावा जुल्म के विरुद्ध हमेशा संघर्ष करना ही खालसे का धर्म है। ■

सिख धर्म : एक युग-पलटाऊ लहर

*-स. कृपाल सिंघ**

भारत के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में बसे पांच नदियों वाले देश को पंजाब कहा जाता है। प्राचीन समय में यह 'सप्त सिंधु' के नाम से जाना जाता था, क्योंकि इसमें सात नदियां बहती थीं। यह एक हरा-भरा और उपजाऊ देश है। यहां की मिट्टी सोना उगलती और गाय-भैंस इतना दूध देती हैं कि इसे दूध-घी का देश भी कहा जाता है।

भारत की उत्तर-पश्चिम दिशा से जितने भी हमलावर आए वे पंजाब से होकर आगे बढ़े, इसलिये इसको 'दर-ए-हिंद' भी कहा जाता है। इस क्षेत्र के लोग हमेशा विदेशी जरवाणों के घोड़ों के सूमों, तोपों के गोलों, तलवारों और आग की मशालों का बेदर्दी से शिकार होते रहे हैं। कभी सिकंदर तो कभी यवन, कभी शक्क और कभी कुषण। फिर बारी आई अरब और रेगिस्तान के खूंखार लुटेरों की जिन्होंने बाबर से पहले साठ बार पंजाब पर हमले किये। इनमें महमूद गजनवी के सत्रह, गौरी के दस, बाबर के पांच और तैमूर का एक हमला भी शामिल है।

इन हमलों में भारत के लाखों निर्दोष लोगों का खून, मज़हब के नाम पर बहुत बेदर्दी से बहाया गया, कटे सरों के मीनार बनाये गये, हज़ारों नौजवान लड़कियों की इज्जत-आबरू गज़नी के बाज़ारों में नीलाम होती रही। सैकड़ों वर्ष पुराने शहर मिट्टी के ढेर बन गये और सैकड़ों धर्म-स्थानों की मर्यादा भंग हुई। आखिर भारतवासी इसे किस्मत का ही एक हिस्सा समझने लगे। वे किस्मत को कोसने लगे, इसे अपने देवी-देवताओं का प्रकोप मानने लगे और जंत्र-मंत्र, जादू-टोनों और अंध-विश्वासों के जाल में बुरी तरह फंस कर रह गए।

हिंदू धर्म का वर्ण-आश्रम उनके लिये वर की जगह श्राप बन गया। ब्राह्मण पैसे के लालच में कर्म-कांड को बढ़ावा देने लगे। क्षत्रिय लोग अपना जुझारूपन भूल चुके थे। वैश्य और शूद्र गुलामी की जिंदगी बसर करने लगे। मुल्लां-काजी झूठी कसमें खाकर और घूस लेकर न्याय करते। राज्यशाही और नौकरशाही कुत्तों की तरह लोगों का खून चूसने लगी- 'अंधेर नगरी चौपट राजा।' ऐसे गिरे हुए समाज और मानसिकता के नमूने इतिहास में कम नहीं हैं। जब मोहम्मद-बिन-कासिम ने सिंध पर हमला किया तब ब्राह्मणों ने एक मंदिर की चोटी पर लहराते झंडे के ऊपर एक मंत्र बांध दिया कि हमलावर अपने आप हार कर भाग जाएगा, परंतु ऐसा कभी नहीं हुआ। उधर मुसलमान भी कम अंधविश्वासी नहीं थे। पठानों ने जब बाबर के हमले की खबर सुनी तो उन्होंने बहुत से मुस्लिम फकीरों को जादू-टोने और तावीज़ों से बाबर के हमले को नकारा करने को कहा। पर जादू-टोनों से कोई एक भी मुगल अंधा नहीं हुआ।

फिर उठी आखिर सदा तौहीद की पंजाब से।
हिंद को इक मर्द-ए- कामिल ने जगाया ख्वाब से।

यह मर्द-ए-कामिल थे श्री गुरु नानक देव जी। पंजाब के एक छोटे से गांव रायभोय की

**रीसर्च स्कालर, सिख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शि: गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर।*

तलवंडी में पैदा हुए। अब यह पाकिस्तान में ननकाणा साहिब के नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने भारत की दुर्दशा को देखा, जांचा-पड़ताला, महसूस किया और उसे सुधारने का बीड़ा उठाया। इस कठिन काम को सर-अंजाम देने के लिए उन्होंने देश-विदेश की यात्रा की, लोगों को कारण और निवारण बताये। हरेक जगह उन्होंने लोगों को फोकट कर्मकांड, वहम-भ्रम और गैर-जरूरी रस्मों-रिवाज़ों को त्यागने की प्रेरणा की और नेकी, ईमानदारी, नम्रता, सहन्शीलता, सत्य, प्यार, सेवा और परोपकार जैसे गुणों को धारण करने पर जोर दिया। उन्होंने मनुष्य की एकता और समानता का प्रचार किया और हर किस्म के छूआछूत के विरुद्ध कड़ी आवाज़ बुलंद की। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि संसार में कोई पवित्र और कोई अछूत नहीं होता, यह सब आडंबर मनुष्य ने खुद बनाये हैं। परमात्मा इन चीजों से निर्लेप है। वह हम सबका पिता है और हम सब भाई-भाई हैं।

इतना ही नहीं उन्होंने खुद निर्भय और निधड़क होकर ज़ालिम बादशाहों और अन्यायी हकूमत के विरोध में ज़ोरदार आवाज़ उठाई। राजाओं और इनके अहिलकारों की, कसाई, शेर और कुत्ते जैसे सख्त शब्दों से निंदा की और उनके अत्याचारों को सरे बाज़ार नंगा किया। *'कलि काती राजे कासाई'* और *'राजे सीह मुकदम कुते-जाइ जगाइन्हि बैठे सुते'* कहकर हमलावर बाबर को भी उसके मुंह पर खरी-खरी सुनाई और कहा, *'खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ ॥ आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ ॥'* उसकी फौज को 'पाप की जंञ (बारात)' कहकर फिटकारा। गुरु नानक साहिब ने यहां के पठान हुक्मरानों को भी इस बात पर कोसा कि वे लोग अय्याशी और भोग-विलासी में पड़े रहे और बाबर के हमले के वक्त प्रजा की रक्षा नहीं की। इस तरह सदियों की गुलामी के बाद गुरु नानक साहिब ही एक पहले पुरुष थे, जिन्होंने ज़ुल्म, ज़ब्र और गुलामी के विरुद्ध आवाज उठाई और भारतवासियों को गहरी नींद से जगाया।

गुरु नानक साहिब ने वक्त की हकूमत के खिलाफ चाहे कोई हथियारबंद टक्कर नहीं ली, पर उन्होंने सिख धर्म का जो बीज बोया, वह दस गुरु साहिबान के रूप में फला-फूला और उसने भारत के धर्म-मंडल को ही नहीं बल्कि इतिहास को भी बदल दिया। अपने निशाने और उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने अपने जीते जी अपना जानशीन नियत किया, जिनका नाम था श्री गुरु अंगद देव जी।

श्री गुरु अंगद देव जी सिखों के दूसरे गुरु हुए हैं और उन्होंने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा दी गई विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए सिखों को एक अलग धर्म में जत्थेबंद किया। पंजाबी लिपि जो पहले से चली आ रही थी और कम विकसित थी, को सुधारा और इसको प्रयोग करके सर्वप्रिय बनाया। गुरु जी के इस महान प्रयास से इसको 'गुरमुखी लिपि' के नाम से पुकारा जाता है। उन्होंने लंगर की संस्था का विस्तार किया और पक्का किया, जिससे जात-पात का भेद-भाव समाप्त होने लगा। गुरु जी ने अपनी सरगरमियों का केंद्र खडूर साहिब को बनाया।

तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी ने अपने हर दर्शनाभिलाषी के लिये, चाहे वह ब्राह्मण था या अछूत, राजा था या रंक, सबके लिये यह जरूरी कर दिया कि वह पहले पंगत में बैठकर लंगर छके और फिर गुरु जी के दर्शन करे। इस हुक्म की अकबर बादशाह को भी पालना करनी पड़ी। गुरु जी ने सिख धर्म के प्रचार

को तेज़ करने के लिये देश-देशांतर में बाईस (२२) केंद्र स्थापित किये। उन्होंने अपना मुख्य केंद्र गोइंदवाल नगर को बनाया, जो ब्यास दरिया के किनारे स्थित है।

चौथे गुरु श्री गुरु रामदास जी थे। उन्होंने अमृतसर शहर की नींव रखी और इसे बसाया भी। धीरे-धीरे यह सिखों का केंद्रीय स्थान बना। इसी शहर में पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी ने सिखों का एक महान तीर्थ श्री हरिमंदर साहिब बनवाया, जिसकी नींव एक मुसलमान फकीर साईं मीयां मीर जी से रखवाई। उन्होंने अपनी, अपने से पहले गुरुओं, संतों और भक्तों की बाणी को संग्रह कर एक 'ग्रंथ साहिब' की रचना की जिसे अब श्री गुरु ग्रंथ साहिब कहा जाता है।

श्री गुरु अरजन देव जी के वक्त दिल्ली तख्त का मालिक मुगल बादशाह जहांगीर था। वह दूसरे धर्मों के प्रति तंगदिल और तुअस्सबी था। सिख धर्म की बढ़ती लोकप्रियता उसकी आंखों में रड़कने लगी और उसने कई झूठे आरोपों के तहत श्री गुरु अरजन देव जी को अमानवीय यातनाएं देकर शहीद कर दिया। धर्म के लिये दी गई शहादत का नतीजा यह हुआ कि गुलामी तथा मुस्लिम हकूमत के जुल्म और अन्याय के विरुद्ध सिखों के दिलों में नफरत जाग उठी और उनमें इन हालात का टाकरा करने की भावना और दिलेरी उत्पन्न हो उठी। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत जहां विश्व के इतिहास की एक अति दर्दनाक घटना भी है वहां वह सिख धर्म और इतिहास का एक अहम मोड़ भी है। इस शहादत ने सिखों के दिलो-दिमाग में यह बात भर दी कि अगर वे इज्जत से जीना चाहते हैं तो उन्हें शस्त्रधारी होकर लड़ना पड़ेगा। कहा जाता है कि अपनी शहीदी से पहले गुरु साहिब ने अपने सिखों को पैगाम दिया कि 'मैंने अपने जीवन का उद्देश्य पूरा कर लिया है। तुम मेरे पुत्र (गुरु) हरिगोबिंद के पास जाओ और उसको मेरी तरफ से धीरज दो। उनको कहना कि वह मेरा शोक न मनाये, न ही कायरों की तरह रोए और विलाप करे, इसकी जगह वाहिगुरु-परमात्मा के गुण-गायन करे। पूरे शस्त्रधारी होकर गुरगद्दी पर बैठे और जितनी ज्यादा से ज्यादा फौज रख सकता हो रखे।'

पंचम पातशाह के सपुत्र, छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने ऐसा ही किया। उन्होंने मीरी और पीरी की दो तलवारें पहनीं, संत-सिपाहियों की फौज बनाई, श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख्त साहिब बनवाया और अपने सिखों को हुक्म दिया कि वे अब धन की जगह शस्त्र और बढ़िया घोड़े ही भेंट किया करें। ऐसा ही होने लगा। गुरु साहिब रोजाना श्री अकाल तख्त साहिब पर नौजवानों की शारीरिक कसरतें करवाते, जंगी करतब करवाते। श्री अकाल तख्त साहिब पर गुरु जी दरबार लगाते और लोग उनको सच्चा पातशाह कहते। धीरे-धीरे गुरु जी के पास हजारों योद्धा हो गये जो धर्म की रक्षा हेतु हर समय अपनी जान तक देने को तैयार रहते। गुरु जी ने अमृतसर शहर की रक्षा के लिये लोहगढ़ नाम का एक छोटा सा किला बनवाया। क्या यह बात किसी करामात से कम है कि श्री गुरु नानक देव जी के शरीर छोड़ने के बाद सत्तर वर्ष के संक्षिप्त समय में ही पंजाब में मुगलों की जाबर हकूमत के साथ हथियारबंद टक्कर लेने के लिये सिख तैयार हो गए थे? गुरु जी की सैनिक कारवाइयों को देखते हुये जहांगीर बादशाह ने बहाना बना कर उनको ग्वालियर के किले में नज़रबंद कर दिया, जहां और भी कई हिंदू राजा कैद किये हुए थे। गुरु जी की नज़रबंदी

के खिलाफ सिखों और दूसरे लोगों के दिलों में आक्रोश बढ़ने लगा।

अमृतसर से सिख, जत्थों के रूप में इकट्ठे होकर गवालियर के किले की यात्रा पर आने लगे और यह रोष भरा आंदोलन दिन-ब-दिन तेज़ होने लगा। लाहौर के एक सूफी संत सांई मीआं मीर जी, जिनका गुरु-घर से बहुत लगाव था और लाहौर के ही एक मुगल अधिकारी वज़ीर खान जो धर्मनिरपेक्षता में विश्वास रखता था, दोनों ने मिलकर बादशाह जहांगीर को गुरु जी को छोड़ देने की अपील की। लोगों में बढ़ती बेचैनी को देखते हुये जहांगीर ने गुरु हरिगोबिंद साहिब को छोड़ दिया। इतना ही नहीं बादशाह ने गुरु जी के कहने पर किले में बंदी दूसरे बावन (५२) हिन्दू राजाओं को भी रिहा कर दिया। इस परोपकार के लिये गुरु साहिब को 'बंदी छोड़ दाता' भी कहा जाता है। इसके बाद जहांगीर ने सिखों के मामलों में कभी सीधा दखल नहीं दिया।

जहांगीर के बाद शाहजहां ने गुरु जी के बाबत अपनी नीति बदल ली, जिसकी वजह से शाही सेना और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बीच चार लड़ाइयां हुईं। सभी में गुरु साहिब की जीत हुई। गुरु साहिब ने यह युद्ध आत्म-रक्षा के लिये लड़े। इन युद्धों के कारण सिखों के मनों में वीर रस भर गया और वे जब्र और जुल्म के विरुद्ध डटकर लड़ने और विदेशी हकूमत की मुगल ताकत को नाश करके धर्म के राज्य को कायम करने की तैयारी में जुट गये। धर्म के लिये मर-मिटने का जज्बा तो पहले ही श्री गुरु अरजन देव जी ने अपनी शहीदी से सिखों के मन में भर दिया था, अब युद्ध जीत कर उनके दिलों में राजनैतिक चेतना भी प्रचंड हो उठी थी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के अकाल चलाणे के बाद उनके पोते श्री गुरु हरिराय साहिब जी सिखों के सातवें गुरु बने। उन्होंने अपने पिता जी के आदेश के अनुसार २२०० घुड़सवारों की सेना बनायी पर उनको कभी भी कोई लड़ाई की ज़रूरत नहीं पड़ी। श्री गुरु हरिराय साहिब जी के जानशीन श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी बने। वे केवल आठ वर्ष की आयु व्यतीत कर ज्योति जोत समा गए।

उनके बाद गुरगद्दी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के सबसे छोटे सपुत्र श्री गुरु तेग बहादर जी को मिली। उस समय भारत में औरंगजेब का शासन था जो एक कट्टरपंथी बादशाह था। उसने हिंदुस्तान ही नहीं सारी दुनिया को 'दारुल-इस्लाम' बनाने का बीड़ा उठाया और गैर-मुसलमानों पर तरह-तरह के जुल्म करने शुरू कर दिये। हिन्दू धर्म को दुनिया से मिटा देने का खुला ऐलान कर दिया। श्री गुरु तेग बहादर जी ने जगह-जगह जाकर इसका विरोध किया तथा लोगों को धर्म न छोड़ने की प्रेरणा की। कश्मीरी पंडितों की दुख भरी दास्तान सुनी और धर्म की रक्षा के लिये कुर्बान होने का फैसला कर लिया। आपने कश्मीरी पंडितों को कहा, 'तुम दिल्ली जाओ और औरंगजेब को बताओ कि धर्म के रक्षक श्री गुरु नानक देव जी की ज्योति अब इस वक्त नौवें गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी में प्रकाशमान है। अगर तुम उनको मुसलमान बना लो तो हम सब अपने आप मुसलमान बन जाएंगे।' मुगल हकूमत द्वारा गुरु जी को उनके कुछ सिखों को तरह-तरह की यातनाएं देकर शहीद किया गया और फिर गुरु साहिब जी का सिर कलम करके उनको शहीद कर दिया गया। गुरु साहिब की यह शहीदी विश्व के इतिहास में पहली ऐसी शहीदी है जो किसी महापुरुष ने दूसरे धर्म की रक्षा के लिये दी। उन्होंने अपनी शहादत देकर सारे भारत

की इज्जत रख ली, इसी लिए उनको 'हिंद की चादर' भी कहा जाता है।

उनके सपुत्र श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपनी आत्मकथा 'बचित्र नाटक' में इस शहीदी को उस समय का एक बहुत बड़ा साका बताते हुये लिखा है:

तिलक जंञू राखा प्रभ ता का ॥ कीनो बडो कलू महि साका ॥ . . .

धरम हेत साका जिनि कीआ ॥ सीसु दीआ पर सिररु न दीआ ॥

श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की शहादत के परिणाम बहुत ही दूरगामी निकले। गुरु साहिब जी की शहीदी को सिखों ने ही नहीं बल्कि भारत के सारे हिंदू भाईचारे ने अपने धर्म के लिये दी गई कुर्बानी समझा और उनके दिलों में अत्याचारी मुगल हकूमत के जुल्मों का डटकर मुकाबला करने की प्रबल इच्छा जाग उठी।

केवल नौ वर्ष की आयु में ही सिख धर्म को चलाने और सही दिशा-निर्देश देने का भारी बोझ बाल गोबिंद राय जी के कंधों पर आ गया। जवानी की दहलीज पर कदम रखते-रखते गुरु जी ने पंजाबी, संस्कृत और फारसी आदि भाषाओं में मुहारत हासिल कर ली थी, पर साथ ही साथ शस्त्र-विद्या में भी निपुन्नता हासिल की। समय के चलते गुरु साहिब ने यह प्रयास भी किया कि पंजाब और आस-पास के हिंदू राजाओं को जत्थेबंद करके मुगल साम्राज्य के विरुद्ध एक मज़बूत मोर्चा कायम किया जाए। पर इन तथाकथित राजाओं, महाराजाओं, सरदारों और ठाकुरों की बहादुरी और आत्म-सम्मान, मुगलों की गुलामी से कब का मर चुका था। उल्टा ये लोग हकूमत के खुशामदीद बनकर मुगल साम्राज्य विरोधी आंदोलनों को दबाने में लगे रहते।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी योजनाबद्ध तरीके से मुगलिया हकूमत के विरुद्ध धर्म-युद्ध की तैयारी करने लगे। नाहन के राजा मेदनी प्रकाश के बुलावे पर गुरु साहिब यमुना नदी के किनारे रमणीक स्थान पर एक छोटी सी नगरी 'पांवटा साहिब' बसाकर रहने लगे। वहां उन्होंने वीर रस भरपूर साहित्य की रचना की ताकि भारत के लोगों के दिलों से फोकट कर्म-कांड और कर्मकांडी विचारों को निकालकर उनकी जगह वैज्ञानिक सोच और बहादुरी भरी जा सके। इस तरह वीर रस साहित्य से लोगों की मनोवृत्ति बदलने के साथ-साथ गुरु साहिब ने उनको वीर और योद्धा बनाने हेतु उनकी सैनिक शिक्षा पर भी ज़ोर दिया। गुरु साहिब की कमान में हजारों नौजवान घुड़सवारी, तीर-अंदाजी, भाला फेंकना, नेजाबाज़ी और बंदूक चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त करने लगे। इस प्रकार एक छोटी सी सेना तैयार हो गई जिसमें पीर बुद्धू शाह साढौरा के पांच सौ पठान भी वेतन पर भर्ती किये गये।

गुरु साहिब की फौजी गतिविधियों को पहाड़ी राजा संदेह की दृष्टि से देखने लगे। गुरु साहिब द्वारा समाज के गरीब व तथाकथित नीची जाति के लोगों को जंगी प्रशिक्षण देना और इस तरह उनके ऊंची जाति व क्षत्रिय जाति के कामों में लगाना आदि पहाड़ी राजाओं और उनके पूज्य ब्राह्मणों को कैसे अच्छा लगता? नतीजतन बहुत से पहाड़ी राजाओं ने गुरु साहिब के विरुद्ध जंगी कारवाई करने हेतु पहले आपस में फौजी मेल-जोल बनाया और फिर औरंगज़ेब से भी सहायता ले ली।

ऐसे माहौल के चलते पहाड़ी राजाओं, मुगल सेनाओं और गुरु साहिब के बीच तीन लड़ाइयां हुईं, जिनमें गुरु साहिब की जीत हुई। इन जीतों की वजह से गुरु साहिब को एक तो

सैनिक अनुभव हुआ और दूसरा भविष्य में मुगलों के साथ सफलतापूर्वक टक्कर लेने का मनोबल प्राप्त हुआ। इससे उनको यह निश्चय भी हो गया कि समाज के दबे-कुचले और तथाकथित अछूत जाति के लोगों के मनों में जज़्बा भरकर बलवान से बलवान हकूमत से भी लड़कर जीत प्राप्त की जा सकती है। अब जरूरत थी धर्म पर मर-मिटने वाले निर्भीक योद्धाओं की और इस निशाने की पूर्णता के लिये गुरु साहिब ने खालसे की साजना की। अब हिंदू समाज में जाति के हिसाब से सबसे नीच समझे जाने वाले, चमार, नाई, दर्जी, कंमी-कमीन, दुकानदार और हलवाई जैसे लोग, जिन्होंने कभी तलवार को हाथ तक नहीं लगाया था और जिनके पूर्वज ऊंची जाति के लोगों के गुलाम बनकर ज़िंदगी बसर करते थे, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के उत्कृष्ट निर्देशन में निर्भीक शूरवीर बन गए जो हमेशा मरने के लिये तैयार रहते। यह बात भी किसी करामात से कम नहीं कि गुरु जी के खंडे के अमृत ने गीदड़ों को शेर बना दिया और चिड़ियों को बाजों के साथ लड़ाया। इतिहास गवाह है कि गुरु जी का एक अकेला खालसा सवा-सवा लाख के लश्कर के साथ निर्भय होकर इस कदर लड़ा कि दुश्मन भी देखकर दंग रह गया।

अब जात-पात के झूठे रंग में रंगे पहाड़ी राजे ऐसी शक्ति को अपने नज़दीक कैसे बर्दाश्त कर सकते थे, जो जात-पात की झूठी शान के विरुद्ध थी और जो लोक-राज्य के सिद्धांत में विश्वास करती थी? अब लोहे से लोहा टकराने को बेताब था। पहाड़ी राजाओं ने औरंगज़ेब के कुछ फौजदारों, गुज्जर और रंगड़ लोगों की मदद से आनंदपुर साहिब के किले को घेर लिया, पर उनको गुरु साहिब की कमान में खालसे ने ऐसे करारे हाथ दिखाये कि वे घेरा उठाकर भाग गये। इसके बाद गुरु साहिब और पहाड़ी राजाओं के बीच कई बार छोटी-छोटी झड़पें होती रहीं जिनमें गुरु साहिब की ही जीत हुई।

गुरु जी के खालसे का बढ़ता प्रभाव देख अब पहाड़ी राजाओं ने सरहिंद, लाहौर और जम्मू के सूबेदारों और रंघड़-गुज्जर जैसे कट्टर मुसलमान कबीलों को साथ लेकर आनंदपुर साहिब पर धावा बोल कर घेरा डाल दिया। दोनों पक्षों में आठ महीने तक लड़ाई होती रही। बाहर घेरा सख्त होने से किले के अंदर खाने-पीने का सामान खत्म हो गया। बाहर से पहाड़ी राजा और मुगल झूठी कसमें खाकर गुरु साहिब को भरोसा दिलाने लगे कि किला खाली करने पर उन पर हमला नहीं करेंगे। गुरु साहिब को उन पर भरोसा नहीं था, पर हालात को मद्देनजर रखते हुए गुरु जी दिसंबर १७०४ की एक रात को किला खाली कर गए। रास्ते में उन पर मुगल और पहाड़ी राजाओं की सेनाओं ने ज़ोरदार हमला कर दिया जिसकी वजह से गुरु जी का सारा परिवार बिखर गया और अनेक सिंघ शहीद हो गए। गुरु जी के बड़े दो बेटे चमकौर के युद्ध में दुश्मन से लोहा लेते शहीद हो गए और छोटे दो बेटे सरहिंद के सूबेदार वज़ीर खान ने कत्ल कर दिये और गुरु साहिब जी की माता जी ने भी वहां प्राण त्याग दिये। गुरु जी के महिल (सुपत्नियां) किसी तरह दिल्ली की तरफ चले गए।

गुरु साहिब ने फिर भी हार नहीं मानी और औरंगज़ेब को 'ज़फरनामा' लिखकर, उसकी और पहाड़ी राजाओं की काली करतूतों का पर्दाफाश किया और दृढ़ता से लिखा कि 'क्या हुआ जो तूने (औरंगजेब) मेरे चार बच्चे कत्ल कर दिये हैं, अभी तो लाखों कुंडलिनी सांप (सिंघ) तेरी हकूमत को खत्म करने को बाकी हैं।' सरहिंद के सूबेदार को जब पता चला कि

गुरु जी दीना कांगड़ (मालवा) में हैं, तो उसने अपने एक फौजदार को भारी सेना देकर भेजा। रास्ते में इस फौज का टाकरा गुरु जी के उन चालीस सिंघों से हो गया जो नाराज़ होकर आनंदपुर साहिब छोड़ आए थे। खिदराणे की ढाब (मुक्तसर) पर मुकाबला हुआ। एक-एक करके सभी सिंघ शहीद हो गए पर मैदान नहीं छोड़ा। दूसरी तरफ से गुरु जी भी दुश्मन पर तीरों से हमले कर रहे थे। मुगल फौज निराश होकर वापस चली गई। गुरु जी सिंघों की बहादुरी पर बहुत प्रभावित हुए और उन्हें 'चालीस मुक्तों' की पदवी दी।

यहां से गुरु जी तलवंडी साबो जा टिके। १७०७ ई में औरंगज़ेब की मृत्यु हुई तो दिल्ली के तख्त के लिये उनके पुत्रों में लड़ाई छिड़ गई। गुरु जी ने बहादुर शाह की मदद की और जब वह बादशाह बन कर दक्षिण की तरफ गया तो गुरु जी भी उसके साथ गए। इस मित्रता से सरहिंद का सूबेदार वज़ीर खां भयभीत हो गया और उसने गुरु जी को खत्म करवाने हेतु दो पठान भाइयों को ज़िम्मेदारी दी, जिन्होंने मौका पाकर गुरु जी पर सोते वक्त हमला कर उन्हें सख्त जख्मी कर दिया। वे दोनों पठान भाई भी वहीं मारे गये। ज़राहों से गुरु जी का ज़ख्म सिलवाया गया और वह धीरे-धीरे ठीक होने लगा, पर डेढ़ महीने बाद ज़ख्म फिर खराब हो गया। गुरु जी को अब अपना अंत समय नज़दीक आता दिखाई दिया तो वे व्यक्तिगत गुरु-परंपरा को खत्म कर, श्री गुरु ग्रंथ साहिब को स्थायी गुरु उद्घोषित कर अकाल चलाणा कर गए।

गुरु साहिब ने अपने आखिरी समय से पहले रियासत जम्मू के एक वैरागी माधोदास को अमृत छका कर, बाबा बंदा सिंघ बहादुर बनाकर, मुगल हकूमत के साथ टक्कर लेने पंजाब की तरफ रवाना कर दिया और सिखों को हुकमनामे भेज दिये कि वे बाबा बंदा सिंघ बहादुर की जत्थेदारी के तहत इकट्ठे होकर जुल्मी शासन को खत्म करने में उसकी सहायता करें। सिख सिर-धड़ की बाज़ी लगाने हेतु गुरु जी का हुक्म मानते हुए बाबा बंदा सिंघ बहादुर की कमान तले भारी संख्या में इकट्ठे हो गए। बाबा बंदा सिंघ बहादर की कमान में सिखों ने दरिया रावी से लेकर यमुना नदी के बीच के बहुत बड़े इलाके में अपना राज्य कायम कर लिया और पंजाब के इतिहास को एक नया मोड़ दिया। अब ताकत की अहंकारी मुगल हकूमत को पहली बार किसी कौम ने भारत में ललकारा था और उससे गिन-गिन कर बदले लिये थे। यह सब खालसे का ही प्रताप था कि उसने अपने बल पर एक शक्तिशाली मुस्लिम हकूमत से एक बड़ा इलाका छीना और अपने गुरु साहिबान के नाम का सिक्का जारी किया जिस पर यह लिखा था, 'सच्चे पातशाह की मेहर से दो जहान में सिक्का चालू किया। नानक की तलवार हरेक दात बख्शती है। फतह गुरु गोबिंद सिंघ की है, जो बादशाहों के बादशाह हैं।' बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने जो खालसा राज्य की तरफ से शाही मोहर ज़ारी की उस पर यह लिखा था, 'हमने गुरु नानक देव जी और गुरु गोबिंद सिंघ जी से दौलत और शक्ति की जीत प्राप्त की है।'

बाबा बंदा सिंघ बहादुर के बाद का सिख इतिहास भी सिखों के बेशुमार बहादुरी भरे कारनामों और कुर्बानियों से भरा हुआ है, जिसमें मुगलिया हकूमत ने सिखों का खुरा-खोज मिटाने हेतु उन पर असह और अकह जुल्म किये पर सिखों ने कभी हार नहीं मानी और और वक्त आने पर वे मुगल हकूमत के जुल्मों का बदला जरूर लेते रहे। इस कौम का हौंसला

इतना बुलंद था कि दिल्ली को लूटकर वापिस जा रहे नादिरशाह को लूट लिया। सिखों की इस दिलेरी से प्रभावित होकर उसने भविष्यवाणी की कि सिख किसी समय यहां के मालिक बन जाएंगे। इसके बाद सिखों ने काबुल के लुटेरे अहमदशाह अब्दाली को भी कई बार अपने करारे हाथ दिखाये।

१७६१ ई तक अहमदशाह अब्दाली ने मुगलों और मराठा ताकतों को खत्म कर दिया था। उसने सिखों को खत्म करने की पूरी शक्ति लगाई परंतु आखिर उसकी अपनी ही बस हो गई। इस तरह लगभग सात सौ पचास वर्ष की गुलामी के बाद सिख कौम ने अनगिनत कुर्बानियां देकर अपनी जन्म-भूमि को आज़ाद करवा लिया।

महाराजा रणजीत सिंघ ने उत्तर-पश्चिम भारत में एक शक्तिशाली सिख राज्य कायम किया और अपनी विजय के झंडे जमरौद तक फहरा कर उस तरफ से विदेशी हमलावरों का आना-जाना हमेशा के लिये बंद कर दिया और इस तरह गुरु नानक साहिब की सोच को अमली जामा पहनाया जो युग-पलटाऊ साबित हुआ।

■

कविता

मैं धरती हूँ पंजाब की

मैं धरती हूँ पंजाब की।
मैं धरती हूँ पंज-आब की।
सतलुज-जेहलम-रावी-ब्यास-चिनाब की।
मैं धरती हूँ पंजाब की।
मैं धरती माथा टेकन की,
मैं धरती हूँ अरदासों की।
सेहतमंद जिस्मों की, स्वस्थ महकती साँसों की।
मैं धरती अहले-शबाब की।
मैं धरती हूँ पंजाब की।
मैं धरती पांच प्यारों की।
गुरु नानक के दुलारों की।
मंदिर और गुरुद्वारों की।
प्यारे वतन के रखवारों की।
'रंग दे बसंती चोला' नारों की।
भगत सिंघ सरदारों की।
श्रमिकों, गुरु-संवारों की।
आबो-हवा अति मनमोहन मृतक को जीवाले।
चांदी जैसा नीर है इसको पाले व संभाले।
मैं खुद ही अपना दर्पण हूँ,
मोहताज न किसी जवाब की।
मैं धरती हूँ पंजाब की।
मक्की दी रोटी, सरसों के साग की।
मैं सरजमीं जलियांवाले बाग की।
रंग-बिरंगी संस्कृति मेरी, रंग-बिरंगे मेले हैं।
जिंदादिल हैं युवक यहां के और मस्त अलबेले हैं।
सुंदर-सुंदर गली-चौबारे, रंग-बिरंगी हर बस्ती।
गिद्दे-टप्पे भंगड़े में है दुनिया भर की हर मस्ती।
सबद-साखियों, पूजन अर्चन की,
मैं धरती उजले ख्वाब की।
मैं धरती हूँ पंजाब की।
मैं धरती हूँ पंजाब की।

■

-श्री केशवचंद्र सकलानी, १२५-बी, टैगोर कालोनी, देहरादून।

आर्थिक आज़ादी के अभाव में अटके हुए जन-साधारण की दीन-दशा

-सुरिंदर सिंघ निमाणा*

आज़ादी की किसको चाहत नहीं होती? यह सबको प्रिय लगती है। मनुष्य क्या, सभी जीव-जंतु और पशु-पक्षी तक भी आज़ादी सहित घूमना-फिरना, उड़ना एवं खाना-पीना चाहते हैं। मनुष्य को सर्वाधिक सजग प्राणी समझा जाता है। गुरमति भी इसकी साक्षी है। मनुष्य आज़ादी के महत्व को समझता है परंतु इतना होने पर भी यही मनुष्य, दूसरे मनुष्यों, समूह के रूप में दूसरे समुदायों तथा राष्ट्रों (देशों, भूखंडों) की आज़ादी को छीन लेने की बुरी भावना से ग्रस्त है। जंगली जानवरों व पक्षियों को हम कभी-कभी ही लड़ते-भिड़ते और एक दूसरे को चोंचें-नाखून चुभोते तो देख सकते हैं परंतु दूसरे पशु-पक्षियों की आज़ादी को उनके द्वारा नहीं छीना जाता। दूसरी ओर अब तक के मानवी इतिहास में से मनुष्य की इस बुरी भावना को और इसके बड़े स्तर पर हो रहे कर्म-व्यवहार को स्पष्टत: देखा, महसूस किया जा सकता है। गुरमति दृष्टिकोण के अनुसार इस कुवृत्ति एवं इस कर्म-व्यवहार को त्यागना व रोका जाना अति आवश्यक है क्योंकि सारी मानवता एक ही परम पिता की रचना होने के कारण समान है। कोई मनुष्य भी ऊंचा या नीचा नहीं:

-एकु पिता एकस के हम बारिक . . ॥(पन्ना ६११)
-अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥
(पन्ना १३४९)

गुरमति के आगमन के समय भारत भूखंड सदियों पूर्व से विदेशी पराधीनता को सहन् करता आ रहा था। इसके प्रवर्तक सिख गुरु साहिबान ने अपनी क्षमता के अनुसार लोगों को अधिक से अधिक इस पराधीनता की प्रतीति कराई। मानवी एकता, समानता के ऊपर अत्याधिक बल देते हुए उन्होंने समस्त संसार में राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पक्ष से एक पूर्ण स्वतंत्र मानव की कल्पना की। गुरमति दृष्टि के अनुसार कोई मनुष्य, किसी दूसरे मनुष्य का गुलाम नहीं हो सकता अथवा उसे ऐसा नहीं होना चाहिए। गुलामी उस एक सदैव स्थिर रहने वाले परमात्मा की ही हो सकती है। गुरु अरजन साहिब और उनके बाद का गुरु-काल का सिख इतिहास मानवी समानता तथा आज़ादी के लिए कठोर संघर्ष करने का अद्वितीय इतिहास है। यह स्मरण रहे कि यह वह समय था जब अभी यूरोप, अमेरिका का आदि वर्तमान तथाकथित लोकतंत्रीय महाद्वीपों के लोग बादशाही प्रबंध या राजाशाही को सिर गिराकर स्वीकार किये बैठे थे।

यह तो चाहे अपने आप में संतुष्टि वाली बात समझी जा सकती है कि अब तक संसार में यूरोपीय देश साम्राज्यवाद के बंधन में से छूटकर राजनैतिक आज़ादी को प्राप्त कर चुके हैं परंतु लगभग गत आधी-पौनी सदी के समय में जिन अन्य महाद्वीपों के देशों ने अपनी छीनी हुई राजनैतिक आज़ादी को प्राप्त किया है उनकी वर्तमान दशा स्वत: प्रकट कर रही है कि वे

*सहायक संपादक।

राजनैतिक आज़ादी का आनंद लेने से अधिकतर वंचित या अभाव में हैं। आज़ादी का नूर उनके चेहरों पर नहीं देखा जा सकता। इसके पीछे कारणों की एक लंबी श्रृंखला है जिसको उचित प्रकार से जांचने, समझने तथा दूर करने के गंभीर, सच्चे संकल्पी प्रयत्न अभी तक हुए नहीं।

इस समय संसार की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति काफी तीक्ष्ण रूप में बहुलता/अमीरी और अभाव/निर्धनता के असमान विभाजन से ग्रस्त है। एक ओर अमेरिका और जापान जैसे साधन-सम्पन्न देश हैं जिनकी बहुसंख्या मानवी आबादी, आर्थिक आज़ादी का रंग-रस पूर्णत: ले रही है तो दूसरी ओर भारत, पाकिस्तान, नेपाल, तिब्बत, भूटान और लंका आदि एशिया महाद्वीप के देश और अफ्रीका महाद्वीप के अधिकतर देश अपनी राजनैतिक आज़ादी के विभिन्न पड़ाव पूरे कर लेने पर भी, अपने देशों को तंगदस्ती, कमियों एवं अभाव वाली असहनीय स्थिति में ही रख रहे हैं। आर्थिक पक्ष से निर्धन देश अपनी निर्धनता तथा पछड़ेपन को दूर करने के लिए दूसरे देशों या विश्व बैंक से ऋण या कर्ज़ लेते हैं परंतु इससे अधिकतर देशों के जन-साधारण की स्थिति में कोई सुधार कम ही हुआ है। अब वे बहुराष्ट्रीय कंपनियों को पूंजी लाने या निवेश करने का बुलावा दे रहे हैं जिससे उनकी स्थिति और भी अधिक दयनीय होनी तय है। यह स्वसिद्ध सत्य है कि बाहरी सहारों के बल पर कोई व्यक्ति, कौम/समुदाय या देश अपना विकास नहीं कर सकता। अत: संसार में वास्तविक रूप में प्रत्येक स्तर पर असमानता विद्यमान है। असमानता के कारण इन देशों के कुछ मुट्ठी भर लोगों के पास धन के असीम भण्डार हैं जबकि जन-साधारण निर्धनता और अभाव की स्थिति में जैसे-कैसे समय को आगे धकेल रहे हैं। इन देशों के उन लोगों के लिए राजनैतिक आज़ादी क्या मायने रखती है जो खानों/खादानों में से लोहा, कोयला आदि निकालते हुए, अत्यंत गर्मी या अत्यंत शीत में, बहती ऊष्ण हवाओं में जमी हुई बर्फ और कोहरे में सड़कों पर बोझ तथा मनुष्य ढोते हुए और कृषि का जोखिम, कष्टदायक तथा दम तोड़ देने वाला काम करते हुए अपनी आयु का बड़ा भाग रुला देते हैं? उनके लिए काम ही काम है, सांस लेने या आराम/विश्राम करने/लेने की कोई छूट नहीं। इन देशों में ही दूसरी ओर काम न करने वाले वे लोग भी हैं जो काम करने के लिए सक्षम तो हैं परंतु काम करना नहीं चाहते- जिन्होंने मांगने को आसान व्यवसाय के रूप में अपनाया हुआ है तथा इसलिए इनके साथ-साथ बड़े स्तर पर जिम्मेवार इन देशों के समुदायों की तथाकथित धार्मिक-धनवान दानी लोगों की श्रेणी है जो इनको पाल कर अपने आप में 'पुन्य कर्म' कर रही है- अपने नाजायज साधनों द्वारा छीनी दौलत का कुछ भाग यूं ही लगाकर स्वयं को धर्मी दिखा रही है और अपना परलोक सुधारने तथा मरणोपरांत अपना स्वर्ग आरक्षित करने/करवाने का भ्रम पाल रही है। सर्वसाधारण लोगों को अत्यंत कठोर परिश्रम करने पर भी दो वक्त रोटी नसीब नहीं हो रही परंतु उल्लेखाधीन 'पुन्य' करने वाली और 'पुन्य' का धन छकने वाली- दोनों श्रेणियां ही मौजें लूट रही हैं। एक बात अवश्य है कि अव्यस्त (जानबूझ कर काम न करने वाली) श्रेणी अच्छे कपड़े और मकान के बारे में कम सोचती है। परंतु काम करने वालों के लिए मकान और कपड़ा अति आवश्यक जरूरतें हैं जबकि उल्लेख अधीन 'आज़ाद' देशों के बड़ी संख्या में साधारण लोग अच्छे कपड़े और गुजारे योग्य मकान के बारे में सोच भी नहीं सकते।

दूध/फल, दवाइयां, मन-बहलाने के साधन आदि तो उनके लिए बिल्कुल ही अपर्याप्त हैं। ऐसी स्थिति में क्या वे आज़ाद कहलवा सकते हैं?

आज़ाद देशों में हमारे अपने देश भारतवर्ष की स्थिति इस पक्ष से और भी अधिक चिंता का विषय है क्योंकि उन देशों से अधिक विशाल भूखंड वाला प्राकृतिक साधनों के पक्ष से साधन-संपन्न है। इसके उत्तर-स्वतंत्रता (आज़ादी मिलने के बाद का) काल पर एक दृष्टि-मात्र डालने से यह स्पष्ट होता है कि प्राकृतिक साधनों का लाभ उस मानवी शक्ति या श्रमिक वर्ग को बहुत ही कम हुआ है। उन्नत हुई कृषि और उसके कारण हरित और सफेद क्रांतियों का लाभ सर्वसाधारण किसान को बहुत ही कम मिला है। उनकी स्थिति पहले से भी बुरी हो गई है। स्थिति यहां तक पहुंच गई कि देश को समृद्ध समझे जाने वाले पंजाब का, देश के हाथों में से बाहरी देशों से अनाज मांगने वाला ठूठा परे फेंक देने वाला और इस देश के गोदामों को क्षमता से भी अधिक भर देने वाला पंजाब का सिख किसान इस सीमा तक ऋणी हो चुका है कि वह आत्म-हत्या करने वाले ग़लत रास्ते पर चल पड़ा है। गुरु-पातशाहों के नाम पर जीने वाले पंजाब को यह क्या हो गया है? यह गंभीर विचार करने वाली बात है। अत्यंत दीनता-विवशता में पंजाब के जो सदैव चढ़ती कला में रहने वाले, गुरु पातशाहों के हुक्मानुसार धारण किये आशावादी जीवन-दृष्टिकोण को छोड़ने की मुख्य जिम्मेवारी किसी पर तो आयेगी ही! क्या इतने बड़े स्तर पर लोगों की वर्तमान आर्थिक दीन-दशा को देखते हुए हम अपने देश को आज़ाद कह सकते हैं?

आम निर्धनों की तो बात ही और है। देश की मध्य श्रेणी की वास्तविक स्थिति भी आर्थिक पक्ष से निर्धन व सांस रोकने वाली ही है। देश और इसके लोगों की स्थिति आर्थिक स्तर पर हैरान करने वाले रूप में असंतुलन है। फसल भरपूर होती है। मंडियों में इतना अन्न आता है कि खरीदना-संभालना कठिन हो जाता है परंतु निर्धन और निचली मध्य श्रेणी के लोगों की पहुंच में अन्न नहीं। कितनी विडंबना है कि किसान को तो उसकी लागत व श्रम के हिसाब से अनाज की कीमत बहुत कम मिल रही है परंतु दूसरी ओर इसको खरीद करने के लिए जन-साधारण में दम अथवा क्षमता ही नहीं! यदि पहले वर्ग को देखें तो अनाज की कीमत काफी बढ़नी चाहिए परंतु यदि दूसरे वर्ग को देखें तो यह कीमत बहुत कम होनी चाहिए। फिर पहले वर्ग का एक बड़ा भाग फसल के आने के मौसम के समाप्त होते ही स्वयं भी दूसरे वर्ग में शामिल हो जाता है। उसकी उपज अधिकतर उसके पास नहीं रह सकती। उसका उत्पन्न किया अनाज तो देश के अन्न भण्डारों या शाहूकारों व ज़खीराबाज़ों के अन्न-भण्डारों में चला जाना होता है। ऐसी स्थिति में बहुत कुछ किया जाना चाहिए। केंद्र तथा राज्य सरकारों को निर्धन किसानों और अत्यंत निर्धन लोगों को भुखमरी से बचाने हेतु बड़े प्रयास करने बनते हैं। अच्छी बात है कि हमारी वर्तमान सरकार अत्यंत निर्धन लोगों को बहुत कम दाम पर आटा तथा दालें उपलब्ध कराने हेतु प्रयास कर रही है। ऐसा क्रम देश भर में सभी राज्य सरकारों तथा विशेष रूप से तत्काल ही यू. पी. और बिहार आदि की राज्य सरकारों को भी करने की जरूरत है, जहां निर्धन बहुसंख्या में हैं। परंतु इसका अर्थ यह नहीं कि चिरकाल तक ऐसा ही क्रम चलता रहे। वास्तविक समाधान निर्धनता को समाप्त या बड़ी सीमा तक कम करने में ही निहित है। बाहरी सहारों की चिरकालीन नीति कदापि उचित नहीं हो सकती।

आत्म-निर्भरता ही प्राप्त करने योग्य मंजिल है।

देश में प्राप्त अन्न-भण्डार तथा अन्य खाद्य-सामग्री यदि देश की है तो इनकी उपज में मुख्य योगदान डालने वाला श्रमिक वर्ग भला इनसे वंचित क्यों रहे? यदि घर में अभाव हो तो सब्र, शुक्र तथा संतोष का स्वत: अनुभव होना मुमकिन है परंतु यदि घर अन्न तथा अन्य खाद्य-पदार्थों से भरा हो परंतु घर का मुखिया घर के सदस्यों को उनको ये खाने-भोगने न दे तो सब्र, शुक्र तथा संतोष करना मुश्किल होता है चाहे कि सब्र, शुक्र तथा संतोष के भाव बहुत ही अनमोल हैं। मंडियां तथा अन्न-भंडार अन्न से पूर्णत: भरे हैं परंतु देश के निर्धन लोग अन्न से वंचित हैं। उन्हें श्रम करके भी दो समय की रोटी मिलनी तय नहीं। वे भूखे या अधभूखे हैं। देश के बाजार खाद्य-पदार्थों तथा फलों-सब्ज़ियों से भरे पड़े हैं परंतु क्या वे जन-साधारण की पहुंच में हैं? क्या देश का निर्धन इंसान कभी फल खाने या दूध पीने के बारे में सोच भी सकता है? यह बात अलग है कि कई निर्धन बचे-खुचे, गले-सड़े फल का स्वाद चाहे चख ले मगर मनमर्जी का या जरूरत के अनुसार न खा-पी सकने के कारण देश का जन-साधारण वास्तव में 'आज़ाद' नहीं कहलवा सकता। *'खाइए मन भाउंदा, पहिनीए जग भाउंदा'* पंजाबी कहावत कहां लागू करें?

ऐसे ही जन-साधारण को व्यवहारिक रूप में जरूरत के अनुसार पहनने की आज़ादी भी प्राप्त नहीं है। देश भर में घूमने-फिरने की आज़ादी का भी जन-साधारण के लिए कोई अर्थ नहीं क्योंकि यात्रा/सैर-सपाटे के व्यय को सहन् कर पाने की क्षमता उनमें नहीं है।

गुरमति के अनुसार इस मनुष्य देही को मान्यता प्राप्त है तो इसकी जीवित रहने के समय की खाने-पीने और पहनने की आवश्यकताओं की पूर्ति अत्यंत आवश्यक है। गुरमति में खाना, पहनना आदि भक्ति के रास्ते की बाधा नहीं बल्कि भक्ति के लिए सहायक है। गुरमति-अध्यात्मवाद गृहस्थ धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानता है। त्यागवाद, हठ-योग, शारीरिक तप निरंतर अटंक समाधियों को इसमें कोई स्वीकृति प्राप्त नहीं। इसमें माया को नहीं बल्कि एक ओर झुके हुए मायावाद को, माया को एकत्र करने की अंधी दौड़-धूप को नकारा गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के सभी बाणीकार इस बात पर एकमत हैं। माया एकत्र करने की एक ओर झुकी हुई अंधी भाग-दौड़ को स्थान-स्थान पर नकारते हुए गुरमति में मूल मानवी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति को पूर्ण मान्यता प्राप्त है। उदाहरण के तौर पर भक्त कबीर जी पेट की क्षुधा या अतृप्ति के बिना प्रभु-भक्ति न हो पाने का ख़्याल देने की सीमा तक जाते हैं। आप क्षुधा स्थिति में अपने प्रिय परमात्मा को माला वापस करने की बात करके इस ख़्याल को अधिक से अधिक स्थापित करने पर बल दे रहे हैं:

भूखे भगति न कीजै ॥ यह माला अपनी लीजै ॥
(पन्ना ६५६)

भक्त जी प्रभु-भक्ति के लिए अपने स्वामी प्रभु के सम्मुख शर्त वाली नाटकी व रमणीय शैली शब्दावली में फ़रमान करते हैं कि हे प्रभु! तेरे भक्त से तेरी भक्ति तभी हो सकेगी यदि वह ऋणी न होगा, उसने किसी का कुछ देना न होगा। हम अनुमान लगा सकते हैं कि भक्त जी को आर्थिक पहलू से दीन-हीन् इंसान की स्थिति का कितना शिद्दत एवं करुणा भरा एहसास है! यह यथार्थक भी है। ऋणी मनुष्य चिंताग्रस्त रहता है। उससे प्रभु-भक्ति कैसे हो पायेगी? वह चिंता-मुक्त रह कर प्रभु-चिंतन कदापि न कर पायेगा।

रहस्यमय अध्यात्मिक शैली में भक्त जी

अपने वक्त के आर्थिक प्रबंध तथा लोगों की आर्थिक स्थिति का संकेत देते दीखते हैं। जब आप जी इस इच्छा का प्रगटावा करते हैं कि प्रभु-स्वामी यदि अपने भक्त की आश्यकताओं की स्वत: ही पूर्ति करे तो अधिक अच्छी बात है परंतु यदि ऐसा न हो तो मांग कर लेने में भी कोई बुराई नहीं है:

माधो कैसी बनै तुम संगे ॥
आपि न देहु त लेवउ मंगे ॥ (पन्ना ६५६)

इतना ही नहीं, भक्त जी अभाव या कमी की स्थिति में अब अपनी उन आर्थिक आवश्यकताओं का विवरण भी परम पिता परमात्मा के सामने रखते हैं:

दुइ सेर मांगउ चूना ॥ पाउ घीउ संगि लूना ॥
अध सेरु मांगउ दाले ॥
मो कउ दोनउ वखत जिवाले ॥
खाट मांगउ चउपाई ॥ सिरहाना अवर तुलाई ॥
ऊपर कउ मांगउ खींधा ॥
तेरी भगति करै जनु थींधा ॥ (पन्ना ६५६)

भक्त जी आगे कहते हैं कि यह मूल जरूरतें हैं, इसमें प्रभु-भक्त का कोई लोभ बिल्कुल नहीं है। मन तृप्त हो गया तो प्रभु-चिंतन अच्छी प्रकार से संभव होगा:

मै नाही कीता लबो ॥ इकु नाउ तेरा मै फबो ॥
कहि कबीर मनु मानिआ ॥
मनु मानिआ तउ हरि जानिआ ॥ (पन्ना ६५६)

भक्त धन्ना जी भी स्वयं को प्रभु का दास पुकारते हुए, कुछ आवश्यक आर्थिक जरूरतों की पूर्ति की याचना करते हुए मानवी जीवन में गुरमति का आर्थिक पहलू हमारे दृष्टिगोचर करते हैं:

गोपाल तेरा आरता ॥
जो जन तुमरी भगति करंते तिन के काज सवारता ॥१॥रहाउ॥
दालि सीधा मागउ घीउ ॥
हमरा खुसी करै नित जीउ ॥
पन्हीआ छादनु नीका ॥
अनाजु मगउ सत सी का ॥१॥
गऊ भैस मगउ लावेरी ॥
इक ताजनि तुरी चंगेरी ॥
घर की गीहनि चंगी ॥
जनु धंना लेवै मंगी ॥२॥४॥ (पन्ना ६९५)

भक्त रविदास जी के तसव्वुर में बसा बेगमपुरा पूर्णत: आज़ाद मनुष्य के लिए छूटें चाहता है। इसमें क्षमता से बाहरी नजायज कर-लगान के लिए कोई जगह नहीं:

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु ॥
खउफु न खता न तरसु जवालु ॥ (पन्ना ३४५)

यह कुल मिलाकर मनुष्य की आर्थिक आज़ादी की बात ही तो है। गुरमति विचारधारा मनुष्य द्वारा मनुष्य की हरेक प्रकार की पराधीनता को रद्द करती है। यह बात बार-बार ध्यान देने योग्य है कि मनुष्य, मनुष्य का स्वामी नहीं हो सकता क्योंकि न केवल मनुष्यों का ही बल्कि कुल जीव-रचना का स्वामी एक ही सदैव कायम रहने वाला सच्चा पातशाह वाहिगुरु है। इस आज़ाद ख़्याल को गुरबाणी में जगह-जगह व्यक्त किया गया है। गुरमति का एक ही प्रभु देनहार का संकल्प मनुष्य की आर्थिक आत्मनिर्भरता/स्वाधीनता के साथ संबंधित होता महसूस किया जा सकता है। गुरु साहिबान का संवेदनशील हृदय अपने वक्त की राजा श्रेणी, शाहूकार वर्ग और पुरोहित वर्ग से लूटे जाते निर्धनों और असहायों को देख कर द्रवित ही नहीं होता बल्कि तड़पता भी है। शाहूकार वर्ग के सामने, भिखारी की भांति दामन फैलाने वाले मनुष्य को गुरु साहिबान मानवी हाथों की निर्मल किरत करने के लिए उधम-प्रयास करने

एवं एक ही हरि देनहार से विनय करने का आज़ादी भरा, आत्म-सम्मान युक्त ग़ैरत उन्मुख रास्ता बतलाते हैं, जैसे कि:

-उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु ॥
(पन्ना ५२२)

-हरि इको दाता मंगीऐ मन चिंदिआ पाईऐ ॥
जे दूजे पासहु मंगीऐ ता लाज मराईऐ ॥
(पन्ना ५९०)

-ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार ॥
देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार ॥
(पन्ना २५७)

-एकु दातारु सगल है जाचिक दूसर कै पहि जावउ ॥
हउ मागउ आन लजावउ ॥ (पन्ना ४०१)

-तू दाता दातारु तेरा दिता खावणा ॥ (पन्ना ६५२)

गुरमति के अनुसार अधिकता और अभाव दोनों आर्थिक स्थितियां इस कारण भी गलत हैं कि आवश्यकता से अधिक माया एक ओर अनैतिक एवं असामाजिक व्यवहारों को उत्पन्न करती है और दूसरी ओर मायाधारी के लिए चिंता का भी कारण बनती है। जब जरूरतमंद को जरूरत के अनुरूप नहीं मिलती तो वह इसको प्राप्त करने हेतु भटकता है:

जिसु ग्रिहि बहुतु तिसै ग्रिहि चिंता ॥
जिसु ग्रिहि थोरी सु फिरै भ्रमंता ॥
दुहू बिवसथा ते जो मुकता सोई सुहेला भालीऐ ॥
(पन्ना १०१९)

गुरु पातशाह के मन-अंतर में इन दोनों स्थितियों से मुक्त मनुष्य का जो तसव्वुर है, वह आर्थिक पक्ष से समानता वाले मानवी समाज में ही संभव हो सकता है। गुरु पातशाह का यह निर्णय भी स्पष्ट है कि माया का ज़ख़ीरा पापों अर्थात अनैतिक एवं अवैध साधनों तथा ढंगों के बिना नहीं हो सकता:

पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥
(पन्ना ४१७)

जन-साधारण का रक्त निचोड़ कर माया के ढेर लगाने वाले जो भी मायाधारी गुरु साहिबान के संपर्क में आये उनको गुरु साहिबान ने परमात्मा के भउ और भाउ/प्यार द्वारा अनैतिक एवं अवैध साधनों तथा ढंगों से एकत्र किये ज़ख़ीरे, निर्धनों-असहायों के लिए खोल देने के लिए प्रेरित किया। गुरु साहिबान ने धनवानों, भूपतियों, राजाओं तथा सम्राटों को जन-साधारण की लूट/शोषण करने से रोका या प्रेरित किया और इस तरह आर्थिक पराधीनता भोग रहे जनसाधारण की आर्थिक आज़ादी के लिए न केवल कामना ही की बल्कि भरसक प्रयास भी किये।

आर्थिक आज़ादी के अभाव में अटके हुए जन-साधारण की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। रुकावट की स्थिति अवांछनीय है। गतिमानता ही जीवन के अनुकूल है। वहां ही खड़े रहना असहनीय तथा दण्ड तुल्य है। अत: चिरकाल से आर्थिक दीन-दशा के अटकाव में फंसे जन-साधारण के लिए देश के संचालकों द्वारा भरपूर प्रयास करने बनते हैं। उनको आदर्श अगुआई देने के लिए गुरमति तथा सर्वसांझी गुरबाणी से बढ़कर अन्य कोई विश्वसनीय स्रोत मुश्किल ही मिलेगा। राजनैतिक आज़ादी के जश्नों को मनाने से पूर्व और मनाते वक्त जन-साधारण की आर्थिक आज़ादी के बारे में सोचना तथा महत्वपूर्ण घोषणाएं करना सभी के हित में होगा। ■



कविता

मांगने की कला

(छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के जीवन-प्रसंग से प्रेरित)

-स. कुलदीप सिंघ*

एक वृद्धा दुखिया और दीन।
गरीब, फटे-हाल, नेत्रों से हीन।
जा पहुँची, गुरु जी के द्वार।
दीन स्वर में करने लगी गुहार।
'महाराज! मुझ गरीब पर कुछ दया करो।
मेरी झोली भी अपनी रहमतों से भरो।'
गुरु जी ने एक नज़र में ही
उसके सारे कष्ट पढ़ लिए।
और उसी एक नजर में,
उसके दुख-दर्द हर लिए।
बोले, 'माँ कोई वरदान माँग लो।
पर, एक से ज्यादा तुम्हारे नसीब में नहीं है।
एक ही बार, जो माँगना है माँग लो।'
वो दुखियारी जिसकी चादर में थे सैंकड़ों छेद,
एक 'वर' में क्या मांगती?
घर के नाम पर थी टूटी-फूटी झोंपड़ी,
आँखों से उसे कुछ दिखता नहीं था।
संतान-विहीन, कमजोर, बलहीन।
अबला, लाचार, बीमार, श्रमहीन।
दाने-दाने को मोहताज।
न कोई काम न कोई काज।
न ड्योढ़ी, न बरतन, न अनाज।
गुरु जी ने एक बार फिर चेताया।
अपनी शर्त को पुनः दोहराया।
वृद्धा की दुविधा बढ़ती जा रही थी।
उसकी समझ में कोई बात नहीं आ रही थी।
उसे चाहिए थी नेत्रों की ज्योति।
अपना स्वास्थ्य, दीर्घ आयु और सुख-समृद्धि।
वो हो गयी होशियार और दूरदर्शी।
उसे चाहिए थी अपनी संतान।
और आगे बच्चों की संतान।
उनके रहने का भव्य महल।
अपना और बच्चों का सुख-वैभव।
सबके लिए अपार धन-सम्पदा।
और आने वाली पीढ़ियों पर
प्रभु का वरदहस्त, आशीर्वाद-कृपा।
पर गुरदेव ने बांध दी थी उसकी जुबान।
मांगना था उसको बस एक वरदान।
क्या कुछ ओढ़े क्या निचोड़े?
क्या कुछ मांगे क्या कुछ छोड़े?
तभी प्रकाश हुआ उसके मन में।
सब कुछ सहज हो गया इक पल में।
हुआ उसे अनोखा ज्ञान। सूझा मांगूं यूं वरदान।
बोली, 'महाराज! यदि आप हुए हो मेहरबान।
मुझे दीजिए बस यह वरदान।
मैं अपनी इन आंखों से,
अपने महलों में,
अपनी बहुओं को,
सोने की मधानी से, बच्चों के लिए,
दही रिड़कते हुए देख सकूं!'

■

*डेज़ मेडिकल रोड, १०७-बी, सिंगार सदन, लखनऊ-२२६००५

बादशाह और पातशाह

*-स. जसपाल सिंघ**

मीरी-पीरी के मालिक बंदी छोड़ दाता साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी महाराज का अवतार ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी के आशीर्वाद से हुआ। बाबा बुड्ढा जी ने माता गंगा को आशीर्वाद दिया- आपकी कोख से एक शूरवीर, बडजोधा, परउपकारी, बलशाली पुत्र अवतार लेगा। समय पाकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी महाराज ने अवतार लिया। आप दयालु-कृपालु तो थे ही साथ-साथ वीर, बलशाली, परोपकारी और पूरी शानो-शौकत से भी रहते थे। आप शीश पर कलगी सजाते और पूरी शान से राज-सिंघासन पर विराजमान होते। उस वक्त जहांगीर बादशाह का राज था और उसकी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से अच्छी मित्रता हो चुकी थी।

जहांगीर जानता था कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब शिकार खेलना बहुत पसंद करते हैं तो एक दिन जहांगीर ने गुरु जी से शिकार खेलने के लिये साथ चलने की विनती की। साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी महाराज ने विनती प्रवान की और शिकार के लिये चल पड़े तथा जंगल में जाकर दो अलग-अलग तंबुओं में विश्राम किया।

एक घास काटने वाला, जो मन में बहुत समय से गुरु जी से मिलने की आस लिये था, उसने सुन रखा था कि मीरी-पीरी के मालिक सारी खुशियों के मालिक हैं, जन्म और मरण काटने वाले हैं और यही आस मन में लिये था कि उनके दर्शन करके, उनके चरणों में विनती करके अपना आवागमन का चक्कर मिटा लूं।

आज पता लगा कि मीरी-पीरी के मालिक जंगल में शिकार खेलने आये हैं। उसके अंदर गुरु जी के दर्शन करने की इच्छा जाग पड़ी। पता करते हुए जा पहुंचा जहां तम्बू गड़े हुये थे। एक तम्बू के पास गया जिसके बाहर एक पहरेदार खड़ा हुआ था। उससे घास काटने वाले ने विनती की कि 'सच्चे पातशाह के दर्शन करने हैं!' पहरेदार ने सोचा, बादशाह सलामत से मिलना चाहता है, कोई दुखियारा होगा, सो उसने तम्बू के अंदर भेज दिया। बादशाह जहांगीर बैठा हुआ था। उस घसियारे ने जो टका उसके पास था वह बादशाह के चरणों में रखकर हाथ जोड़कर विनती की, 'सच्चे पातशाह! मेरा जन्म-मरण का चक्कर समाप्त कर दो। जीवन जीने का ढंग बताओ जिससे मेरा आवागमन खत्म हो जाये। मैं बहुत गरीब हूँ, कंगाल हूँ।' ऐसी विनती सुनकर बादशाह बोला, 'ऐ परमात्मा के प्यारे बंदे! जो तू मांग कर रहा है वो मैं नहीं दे सकता। तू चाहे तो मुझसे दौलत, हाथी-घोड़े, वस्त्र मांग ले, जागीर मांग ले, जो मैं तुझे दे सकता हूँ, पर तेरा जन्म-मरण मिटाना मेरी सामर्थ्य में नहीं है।'

घसियारा हैरान-परेशान हो गया कि 'आप पातशाह नहीं हो! मैंने ऐसे ही आपके चरणों में सिर झुका दिया।' उस घसियारे ने तुरन्त अपना टका, जो बादशाह के चरणों में रखा था, उठा लिया और बोला, 'न मुझे धन चाहिये न दौलत,

***C/O** *भारती सेल्स कार्पोरेशन, गांधीनगर, महोबा (यू. पी.)-२१०४२७*

न जागीर चाहिये न जायदाद, न जमीन चाहिये न जमींदारी, मुझे तो केवल एक सच्चे पातशाह के दर्शन चाहियें।'

इस तरह की मिसाल सारे जहां में नहीं मिलेगी कि किसी व्यक्ति ने किसी राजा या बादशाह के आगे चढ़ाया हुआ अपना पैसा या कोई वस्तु वापिस उठा ली हो। ऐसा इसलिये हुआ क्योंकि घसियारा, साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी महाराज के ऊपर भरोसा करने वाला था, उसको किसी का डर नहीं था। घसियारा बेझिझक अपना टका उठा कर उस तम्बू की ओर चल पड़ा जहाँ साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ठहरे हुए थे। बादशाह जहाँगीर देखता रह गया। इस घटना ने उसको झकझोर कर रख दिया। सोचता है, 'हद हो गयी, जिसके शरीर पर पूरे कपड़े भी नहीं हैं, गरीबी में जीवन जी रहा है, फिर भी उसने मेरे पास आकर कुछ मांगा नहीं। मैं बादशाह होकर भी कुछ दे सकने में, कर सकने में समर्थ नहीं। उसने मेरे आगे रखा टका भी उठा लिया।'

घसियारा उस तम्बू में पहुंच गया जहां सतिगुरु जी ने निवास किया हुआ था और सिख भी बैठे थे। टका रखकर माथा टेका। माथा टेककर सतिगुरु जी के दर्शन करके निहाल हो गया:

सु कहु टल गुरु सेवीऐ अहिनिसि सहजि सुभाइ ॥
दरसनि परसिऐ गुरु कै जनम मरण दुखु जाइ ॥
(पन्ना १३९२)

'हृदय शांत हो गया, आँखों से आंसुओं की धारा बह गयी और हाथ जोड़कर विनती की, 'सतिगुरु सच्चे पातशाह जी! आप कृपा करके भवसागर से पार लगाओ। हे दया के सागर! मुक्ति के दाते! जगत के प्रतिपालक! जगत के स्वामी! अनाथों के नाथ! यम का भय बहुत सताता है। इस यम के डर से दूर करो।' सतिगुरु जी ने कृपा भरी दृष्टि करके मेहर की और सति नामु का जाप करने का उपदेश देकर सेवा, सुमिरन, भक्ति की जाच बताई और उपदेश दिया कि सच्चे मन से परमात्मा का सुमिरन करके यमों के भय से बचा जा सकता है। घसियारा ये उपदेश लेकर सारा जीवन गुरु-घर की सेवा करता रहा और मुक्त हो गया:

सतिगुर कै जनमे गवनु मिटाइआ ॥ (पन्ना ९४०)

सो प्रियजनो! गुरु-दुलारो! एक अकाल पुरख परमात्मा पर भरोसा रखो, यहाँ-वहाँ मत भटको। जितने ज्यादा भटकोगे उतना ही और दुख मिलेगा। जितना ज्यादा अकाल पुरख वाहिगुरु से प्यार करोगे उतनी ही मन को शान्ति प्राप्त होगी। ■

कविता

सच्चा सौदा

बाबे नानक का 'सच्चा सौदा', है प्रभु-सुमिरन का सार।
भ्रम और आडम्बर रहित है, यह सत्य का व्यापार।
यह 'सौदा' कर लेने से मानव, बन जाता है नेक इंसान।
और भी 'सौदे' हैं दुनिया में, करनी पड़ेगी सही पहचान।
समय के रहते हे मानव तू, रख ले 'सच्चे सौदे' का मान।
भ्रमजाल में फंस कर तू, मत घटा जीवन की शान। ■

-श्रीमती विमला भारती, १४, लेखराज रेजीडेंसी, फेस-१, बी-ब्लाक, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६००१

नशा नाश की जड़ है

-स. सुरजीत सिंघ*

तम्बाकू ने हमारी संस्कृति और सभ्यता की जड़ों को झकझोर कर रख दिया है। युवाओं को अपनी कापियों-किताबों के लिए भले ही कुछ दूर जाना पड़े, परंतु पान, गुटखा, तम्बाकू हर सड़क, गली, नुक्कड़ पर सहज ही उपलब्ध हो जाएगा। यह निश्चित है कि नशे के दुष्परिणाम दूरगामी और विस्तृत होते हैं, किन्तु मनुष्य उन्माद में इन्हें भुला कर निरंतर गलती करता चला जाता है जिससे अंत में निराशा ही हाथ लगती है। १० साल के बच्चे से लेकर बड़ी उम्र के बुजुर्ग व्यक्ति तक के मुख से गुटखे, तम्बाकू के पीक निकलते और बीड़ी, सिगरेट से कोयले के रेल इंजन की भांति धुआं निकलते हर स्थान पर, हर पल, हर घड़ी देखा जा सकता है। आश्चर्य है कि देश के जिन बच्चों तथा युवकों ने अभी 'समाज' शब्द का अर्थ तक नहीं जाना है आज उन्होंने ही बड़ी आसानी से 'समाज' में व्याप्त नशे की बुराई को ग्रहण कर लिया है।

जब एक अभिभावक परिवार में बैठकर स्वयं गुटखा-पान चबाकर पीक इधर-उधर थूकता फिरता है, धूम्रपान कर जहरीला धुआं उगलता है तो क्या उसके लाड़ले बेटे अपने पिता का अनुसरण करते हुए ऐसा करने को उत्सुक नहीं होंगे? जरा सोचो! जब एक परिवार का मुखिया ही, अपने बच्चों के हाथों से बाहर से ऐसी आपत्तिजनक जहरीली साम्रगी मंगवाता है, तो वह इंसान परिवार के बच्चों में आदर्श के बीज कैसे बो सकता है? इससे भी अधिक चिंता की बात यह है कि कुछ महिलाएं भी इसमें भागीदार हैं। आवश्यकता है उन तमाम अभिभावकों को सोचने, विचारने और मनन करने की जो जाने-अनजाने में स्वयं तो इस भयंकर महामारी के शिकार हो चुके हैं, किंतु अपने बच्चों को भी अनायास ही इस गर्त में धकेल कर उनके हंसने, खेलने व स्वस्थ जीवन पर कुठाराघात कर, देश व समाज को भविष्य में मजबूत आधार प्रदान करने के अपने अधिकार से वंचित किया जा रहा है, जो देश-द्रोह से कम नहीं है। बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, गुटखा से भयानक रोग कैंसर के साथ-साथ उच्च रक्तचाप, हृदयघात, दमा, रक्त-धमनियों में रक्त का जमाव, पेट दर्द, बदहजमी व अनेक चिंताओं को निमंत्रण मिल जाता है। अत: हमें अपनी संस्कृति व सभ्यता तथा पर्यावरण को शुद्ध, साफ, सुथरा और जीवन को स्वस्थ बनाये रखने के लिए इस महामारी को जानलेवा दुश्मन मानकर इससे निरंतर बचते रहना होगा। सरकार को समस्या की जड़ पर प्रहार कर तम्बाकू की खेती पर ही रोक लगा देनी चाहिए, जिससे 'न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी' की कहावत के अनुसार तम्बाकू होगा और न ही महामारी रहेगी, सब तरफ सुख-शांति और खुशहाली ही दिखेगी। तम्बाकू का सेवन न करने वाले व्यक्ति को यह पूर्ण अधिकार प्राप्त है कि यदि कोई निर्लज्ज होकर उसके आस-पास धूम्रपान करता है तो वह बचाव के लिए तम्बाकू सेवन करने वाले को ऐसा करने से रोक सकता है। सरकार ने इस संबंध में कानून बना रखा है और हर वर्ष ३१ मई को विश्व तम्बाकू विरोधी

* ५७-बी, न्यू कालोनी, गुमानपुरा, कोटा।

दिवस भी मनाया जाता है। सरकारी कानून तो फाइलों में ही धूल चाटते रहते हैं और क्रियान्वित बिल्कुल भी नहीं हो पाते। सरकारी कार्यालय और सार्वजनिक स्थानों पर मात्र 'धूम्रपान निषेध' की लिखी तख्तियां ही टंगी रहती हैं। ऐसे दिवस इसलिये मनाए जाते हैं कि इन्हें प्रतीक मानकर साल भर चलने वाले प्रयासों की जांच की जाये, कमियों को पहचान कर सुधार लाया जाये और जोश से मुहिम चलाई जाए।

सार्वजनिक स्थानों पर बीड़ी, सिगरेट इत्यादि के विज्ञापन छापना तथा विज्ञापन प्रसारण करना अथवा लगाना, १८ वर्ष से कम आयु के व्यक्ति को बीड़ी, सिगरेट, सिगार इत्यादि बेचना, शिक्षण संस्थानों एवं विद्यालयों-महाविद्यालयों से एक सौ मीटर की परिधि में बीड़ी, सिगरेट, गुटखा एवं अन्य तम्बाकू-युक्त सामग्री का किसी भी रूप में विक्रय, भंडारण एवं वितरण करना दंडनीय अपराध की प्रक्रिया में आता है। शिक्षण संस्थानों के आस-पास स्मैक आदि बेचने वाले तत्वों पर कड़ी नज़र रखी जाए। ऐसे अपराधों की पुनरावृत्ति होने पर न्यूनतम पाँच सौ रुपये से लेकर अधिकतम एक हजार रुपये तक के आर्थिक दंड अथवा तीन माह तक के कारावास की सजा का प्रावधान है। अधिनियम की धारा १० के अन्तर्गत ऐसे स्थानों के प्रभारी व्यक्तियों का यह दायित्व बनता है कि उस क्षेत्र में चेतावनी के रूप में 'धूम्रपान निषेध क्षेत्र, धूमपान वर्जित है, धूम्रपान दंडनीय अपराध है' इत्यादि लिखकर प्रदर्शित करें। राज्य सरकार को अधिनियम की धारा ३ के अन्तर्गत यह अधिकार प्राप्त है कि वह किसी भी सार्वजनिक क्षेत्र को अधिसूचना जारी कर 'धूम्रपान वर्जित क्षेत्र' घोषित कर सकती है। अधिनियम की धारा १२ के अनुसार प्राधिकृत अधिकारी या उपनिरीक्षक पद के किसी भी पुलिस अधिकारी द्वारा अधिनियम का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को ऐसे प्रतिबंधित क्षेत्र से तुरंत बाहर खदेड़ा जा सकता है अथवा लिखित रिपोर्ट दर्ज करायी जा सकती है या उसे कानूनी प्रक्रिया मे डाला जा सकता है। इसी प्रकार अधिनियम के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार भी प्राप्त है कि वह धूम्रपान का विरोध कर धूम्रपान करने के दोषी व्यक्ति के विरुद्ध दंड-प्रक्रिया के लिये लिखित रिपोर्ट दर्ज करा सकता है अथवा कानूनी वाद प्रस्तुत कर सकता है। स्मरण रहे कि धूम्रपान एक विषैला जहर है, सामाजिक बुराई है जो मनुष्य के तन, मन, धन पर एक साथ डाका डालते हुए, उसके परिवार को तहस-नहस करके भी उसका पीछा नहीं छोड़ता।

यह कटु सत्य है कि युद्ध, अकाल अथवा माहमारी ने भी शायद मानव जाति का इतना नुकसान नहीं किया जितना कि नशों ने। तभी तो बारंबार चेतावनी दी जाती है कि नशों का सेवन करना अपनी अकाल मृत्यु को आमंत्रित करना है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार तम्बाकू का सेवन लगभग ३० घातक जानलेवा बीमारियों को निमंत्रण देता है। यह सही है कि सरकार को तम्बाकू से ६ हजार करोड़ रुपये प्रतिदिन आमदनी होती है, किन्तु इसके विपरीत तम्बाकू-जनित बीमारियों के उपचार पर भी २७ हजार करोड़ रुपये प्रतिवर्ष अर्थात् ७४ करोड़ रुपए प्रतिदिन खर्चा भी हो रहा है। आश्चर्य है कि सरकार आमदनी से चार गुना से भी अधिक खर्चा तम्बाकू के दुष्परिणामों का मुकाबला करने पर व्यय कर रही है, फिर भी इसे खुली छूट प्राप्त है। इस महामारी से सिर्फ भारतवर्ष में ही औसतन लगभग २२०० मौतें प्रतिदिन हो रही हैं। टोकियो, जापान के

शोधकर्ताओं की विस्तृत जांच- अध्ययन की रिपोर्ट के अनुसार धूम्रपान करने वालों की संगत-मात्र से ही धूम्रपान नहीं करने वालों में हृदय रोग तथा मृत्यु का खतरा ३० प्रतिशत तक बढ़ जाता है। बस इतना ही नहीं, धूम्रपान के धूएं के सम्पर्क में मात्र आधा घंटे ही रहने से धूम्रपान न करने वालों के हृदय का रक्त-संचार बुरी तरह से प्रभावित हो जाता है। यह बात अन्य अध्ययनों से भी प्रमाणित हो जाती है। नशे से व्यक्ति की सोचने-समझने की शक्ति क्षीण होती चली जाती है, जिससे आंतरिक चेतना प्रभावित होती है और वह विवेकहीन होने लगता है तथा निरंतर पतन की ओर जाने के साथ-साथ उसे विभिन्न जानलेवा बीमारियां भी आ घेरती हैं। इसलिए बारंबार स्मरण कराया जाता है— 'पान, गुटका, चरस, तम्बाकू-तन, मन, धन सबके हैं डाकू।' अत: तंबाकू पर लगनी चाहिये पूरी तरह पाबंदी।

नशा मनुष्य का खून चूस-चूसकर उसे निर्बल, कमजोर कर देता है। साथ ही साथ उसके धन पर डाका डालकर उसे कंगाल और निर्धन भी बना देता है। नतीजतन स्वास्थ्य, धन और परिवार तीनों की एक साथ बर्बादी अर्थात् नुकसान ही नुकसान। आत्म-ज्ञान, आत्म-संयम और आत्म-विश्वास से जो जीवन को सबलता प्राप्त होती है वह नशे के सेवन से निरंतर क्षीण होती चली जाती है, इसी लिए तो सिख धर्म ने इसको पूर्ण रूप से निषेध किया हुआ है।

कनाडा में सिगरेट के हर पैकिट पर इसके सेवन से होने वाली बीमारियों और उनके बारे में ग्राफिक देना सरकारी स्तर पर अनिवार्य है। यही कारण है कि यहां के हर सिगरेट पैकिट पर दिल और दांत के अलावा फेफड़ों की बीमारियों के ग्राफिक भी दिये जाते हैं। सर्वेक्षण में पाया गया है कि इस तरह की चेतावनी लिखे पैकिट हाथ में आने पर धूम्रपान करने वाले व्यक्ति पर कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता है और वह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि वह धूम्रपान करे अथवा नहीं, क्योंकि इसके दुष्परिणाम उसके सामने होते हैं। ब्रिटेन कैंसर रिसर्च ने भी पूरे यूरोपीय देशों में सिगरेट के हर पैकिट पर, 'आइए सिगरेट पीजिए और अपने फेफड़े एवं मुंह के लिए कैंसर मुफ्त ले जाइये' की चेतावनी लिखना अनिवार्य कर दिया है, जो धूम्रपान निषेध हेतु प्रभावी कदम है। यह परीक्षणों से प्रमाणित हो चुका है कि मात्र एक सिगरेट का सेवन करने से जीवन के छ: मिनट तक कम हो जाते है, किंतु आश्चर्य है कि फिर भी तम्बाकू का चलन दिन-प्रतिदिन प्रफुल्लित ही होता चला जा रहा है। फैसला आपके हाथों में है, जिंदगी चाहिए अथवा मौत?

अल्कोहल एक ऐसा पेय प्रतिष्ठित हो रहा है जिसका प्रचलन कम होने के स्थान पर दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। कोई उत्सव हो अथवा मेहमान-मित्र-पार्टी, अल्कोहल का प्रयोग तो तथाकथित स्टेट्स सिम्बल समझा जाने लगा है जबकि इससे होने वाली बीमारियों एवं हानियों की ओर बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया जाता। शराब पीना सामान्यतया नशे का क्षणिक हिलोरा लेने के लिये, तनाव-मुक्ति के लिये अथवा मित्र-बंधुओं के साथ समय व्यतीत करने के लिये प्रारम्भ होता है, जो कि आगे चलकर आदत बन पारिवारिक प्रतिरोधों के उपरांत, मनुष्य के न चाहने पर भी आजीवन उसका पीछा नहीं छोड़ती। मद्यपान से स्वास्थ्य पर कुप्रभाव के कारण सामाजिक व पारिवारिक क्षति, धन की बर्बादी, मानसिक तनाव एवं शारीरिक दुर्बलता होने लगती है। अन्य औषधियों का सेवन करने वाले व्यक्तियों को अल्कोहल से रिएक्शन हो सकता है इसलिये अल्कोहल के

सेवन से बचे रहना ही उचित है।

मद्यपान से होने वाली विभिन्न बीमारियां मुख्यतया निम्नलिखित हैं:

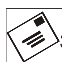
१. लीवर में खराबी होने लगती है जो पाचन-क्रिया को प्रभावित कर लीवर सिरोसिस एवं हेपेटाईटिस जैसे रोगों को आंमत्रित करती है।
२. अत्यधिक मद्यपान से लकवा या फालिस होने की सदैव आशंका बनी रहती है और रक्त में ट्राई ग्लिसराइड का स्तर बढ़ने लगता है।
३. शरीर में मोटापा होने लग जाता है।
४. उच्च रक्तचाप एवं हाइपरटेंशन बढ़ने में भी अल्कोहल का अधिकाधिक योगदान है।
५. हार्ट अटैक या एन्जाइना की सम्भावना मद्यपान करने वालों को, मद्यपान न करने वालों की अपेक्षा अधिक रहती है क्योंकि मद्यपान से कॉरानरी हार्टडिसीज हृदय की मांसपेशियों को क्षति पहुँचती है जिससे हृदय की अनियमितता होने लग जाती है।
६. महिलाओं में अल्कोहल-सेवन से उपरोक्त बीमारियों के अतिरिक्त सन्तानोत्पत्ति की क्षमता में कमी तथा गर्भपात की सम्भावना बनी रहती है तथा ऐसी माताओं से जन्मे हुए बच्चे शारीरिक एवं मानसिक विकार से ग्रसित होते हैं।

यह वर्णनयोग्य है कि घटिया एवं अवैध रूप से निर्मित अल्कोहल अधिक घातक साबित हो सकती है, जैसा कि अक्सर देखने, सुनने एवं पढ़ने में आता रहता है। कच्ची शराब का तो कोई मापदंड अथवा पैमाना ही नहीं होता और न ही प्रयुक्त होने वाले पदार्थों की गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाता है।

गुटखा, पान-मसाला, तम्बाकू, सिगरेट, बीड़ी, अल्कोहल आदि सेवन वालों के तो यही पुरस्कार मिल सकते हैं:

प्रथम पुरस्कार	मौत
द्वितीय पुरस्कार	कैंसर
तृतीय पुरस्कार	टी. बी.
लाखों सांत्वना पुरस्कार	घातक बीमारियां
मिलने का स्थान	बीड़ी-पान की दुकान और दारू के अड्डे
प्रतियोगिता-आयोजक	यमराज
पुरस्कार-वितरक	यमदूत
प्रतियोगिता-स्थल	चिकित्सालय/शमशान घाट

■


आपका पत्र मिला

पत्रिका ने बड़ा प्रभावित किया

पिछले साल की अंतिम तिमाही में नई दिल्ली में स्थित गुरुद्वारा बंगला साहिब में लगी पुस्तक प्रदर्शनी में "गुरमति ज्ञान" को देखने का मौका मिला था। पत्रिका ने बड़ा प्रभावित किया—बधाई। पत्रिका से अभिभूत होकर मैं तत्काल ही पत्रिका का आजीवन सदस्य बन गया।

वास्तव में पत्रिका निकालने में संपादक को बड़ी मशक्कत करनी पड़ती है। यह बात मैं अपने अनुभव के आधार पर भी कह रहा हूं। मैंने भारतीय अनुवाद परिषद की त्रैमासिक पत्रिका "अनुवाद" का काफी समय तक संपादन किया है। वहीं, यह भी सही है कि पत्रिका के नियमित रूप से प्रकाशन के लिए लेखकीय सहयोग की भी अपेक्षा रहती है।

-डॉ. हरीश कुमार सेठी
हिंदी विभाग,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

गुरबाणी चिंतनधारा-१८

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

नमसतं अनंते ॥ नमसतं महंते ॥
नमसतसतु रागे ॥ नमसतं सुहागे ॥२६॥

हे परवरदिगार! तुझे नमस्कार है। तू अनंत है अर्थात् तेरा अंत नहीं पाया जा सकता। वाहिगुरु के अनंत स्वरूप का जिक्र गुरबाणी में अनेक बार आया है, यथा:

ब्रहमा बिसनु रुद्रु तिस की सेवा ॥
अंतु न पावहि अलख अभेवा ॥ (पन्ना १०५३)

साधारण जीव तो क्या, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, त्रिदेव भी जिसका अंत नहीं पा सके। महंते अर्थात् तू बहुत बड़ा है। ईश्वर की विशालता, सर्वव्यापकता का जिक्र भाई गुरदास जी ने भी अनेक बार किया है, यथा:

केवडु द्रिसटि वखाणीऐ केवडु रूपु रंगु परकारा ॥
केवडु सुरति सलाहीऐ केवडु सबदु विथारु पसारा ॥ . . .
अंतु बिअंतु न पारावारा ॥ (वार ८:३)

तुझे नमस्कार है कि तू प्यार-स्वरूप है। ईश्वर ही प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है अर्थात् प्यार का दूसरा नाम ही ईश्वर है। तू प्रेम स्वरूप तथा महाप्रतापी है। तेरे ऐसे स्वरूप को नमन। तभी तो गुरबाणी का फरमान है:

-साचु कहों सुन लेहु सभै जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ ॥ (सवय्ये पातशाही १०)

-नमो सरब सोखं ॥ नमो सरब पोखं ॥
नमो सरब करता ॥ नमो सरब हरता ॥२७॥

हे वाहिगुरु! तुझे इसलिए भी नमस्कार है कि तू 'सरब सोखं' अर्थात् सबको नष्ट करने वाला तथा 'पोखं' सबकी पालना करने वाला है अर्थात् तू ही उत्पत्ति व नाश का कारण है। उस ईश्वर ने जिसकी रचना की है उसे नष्ट करने वाला भी वही आप है। उसके हुक्म में ही सब कुछ हो रहा है। उसके संहारक और सृजक दोनों रूपों को गुरु कलगीधर पातशाह नमस्कार करते हैं।

नमो जोग जोगे ॥ नमो भोग भोगे ॥
नमो सरब दिआले ॥ नमो सरब पाले ॥२८॥

हे परवरदिगार! तुझे इसलिए भी नमस्कार है कि तू त्यागियों में महान त्यागी है तथा गृहस्थियों में महान गृहस्थी है अर्थात् योगियों में योगी तथा भोगियों में महान भोगी है। तू सब जीवों पर दया करने वाला रहमतों का सागर है। तू सबका पालनकर्त्ता है। तेरे दयालु एवं कृपालु स्वरूप को नमस्कार है।

चाचरी छंद ॥ त्व प्रसादि ॥
अरूप हैं ॥ अनूप हैं ॥ अजू हैं ॥ अभू हैं ॥२९॥

हे वाहिगुरु! तेरा न कोई विशेष रूप है और न ही कोई तेरे बराबर का है। तू अचल स्वरूप है और तू जन्म में भी नहीं आता। अनूप का अर्थ है उपमा से ऊपर अर्थात बेमिसाल। हे ईश्वर! तेरे जैसा कोई भी तो नहीं जिससे तेरी तुलना की जा सके। 'अजू' अर्थात अचल, स्थिर स्वरूप, सदैव कायम रहने वाला। 'अभू' जन्म से रहित अर्थात जन्म-मरन के चक्करों से रहित। केवल और केवल वह ईश्वर ही ऐसा है जो समस्त आवागमन के बंधनों से

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४*

मुक्त है। उस बेमिसाल ईश्वर की स्तुति करते हुए तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी की पावन बाणी है:

तिस का सरीकु को नही ना को कंटकु वैराई ॥
निहचल राजु है सदा तिसु केरा ना आवै ना जाई ॥ *(पन्ना ५९२)*

अलेख हैं ॥ अभेख हैं ॥ अनाम हैं ॥ अकाम हैं ॥३०॥

हे ईश्वर! तेरी कोई तस्वीर नहीं बनाई जा सकती। तेरा कोई विशेष पहरावा भी नहीं है। तेरा कोई एक नाम भी नहीं। तुझे किसी विशेष नाम से नहीं जाना जा सकता। हे ईश्वर! तुझे तो कोई कामना भी नहीं है अर्थात तू तो इच्छाओं से भी रहित है। तू निष्काम है। गुरु कलगीधर पातशाह इस बंद में फरमान करते हैं कि हे ईश्वर! तेरी कोई तस्वीर नहीं बनाई जा सकती। आओ! विचार करें इस बाणी के रचयिता पर। गुरु कलगीधर पातशाह का इतिहास जिन्हें भारत में ही नहीं विश्व-इतिहास में बेमिसाल कहा जाता है, उनकी कुर्बानियां बेमिसाल हैं। गुरु पातशाह के लासानी एवं बेमिसाल स्वरूप को श्रद्धा-सुमन अर्पित करते एक शायर के ये शब्द कितने सार्थक हैं:

"इस सोहणी कलगी वाले दी, कोई गल्ल सुनाई जांदी नहीं।
तसवीर बनावण लगदा हां, तसवीर बनाई जांदी नहीं।"

दुष्ट-दमन सरवंशदानी गुरु कलगीधर पातशाह जिन्हें उस मालिक के हुक्म से इस जगत में आना पड़ा, उसी परमात्मा के अनंत गुणों, स्वरूपों को बार-बार नमस्कार करते हुए गुरु पातशाह कलयुगी जीवों को उसी अनंत-बेअंत परमात्मा की सिफत-सलाह करने का उपदेश दे रहे हैं। जीवों का मार्ग प्रशस्त करते हुए उस सर्वशक्तिशाली सत्ता को बार-बार नमस्कार करते हैं। उस गुणों के अथाह सागर के गुणों को हृदय में बसा कर हम भी यह अरदास करने के योग्य बन सकें:

देह सिवा बरु मोहि इहै सुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥
न डरो अरि सो जब जाइ लरो निसचै करि अपुनी जीत करों ॥ *(चंडी चरित्र, पा: १०)*

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उस परमात्मा के समस्त स्वरूपों को नमस्कार की है। जापु साहिब वीर रस से परिपूर्ण बाणी है। इस ओजस्वी बाणी के जाप से हृदय में अनायास ही वीर रस का संचार होता चला जाता है। उस परमात्मा का भय हृदय में सदैव बना रहता है, जिसकी बरकतों से समस्त दुनियावी भय, भ्रम, चिन्ताएं स्वत: समाप्त हो जाती हैं, सभी उसी परमात्मा का गुणगान कर रहे हैं:

नानकु वेचारा किआ कहै ॥ सभु लोकु सलाहे एकसै ॥
सिरु नानक लोका पाव है ॥ बलिहारी जाउ जेते तेरे नाव है ॥ *(पन्ना ११६८)*

अधे हैं ॥ अभे हैं ॥ अजीत हैं ॥ अभीत हैं ॥३१॥

हे वाहिगुरु! तू 'अधै' अर्थात् मनुष्य के सोच-मण्डल से परे है। कहने से अभिप्राय, जहाँ तक मनुष्य की विचार-शक्ति की पहुंच है तू उसके बहुत दूर है। अत: कोई भी व्यक्ति तेरे सम्पूर्ण स्वरूप को अपनी सोच-शक्ति में केंद्रित नहीं कर सकता। अर्थात उस अकाल पुरख के बारे में पूर्णतया सोचा नहीं जा सकता।

गुरु कलगीधर पातशाह उस ईश्वर के अनेक स्वरूपों का वर्णन करते हुए फरमान करते हैं कि हे मालिक! तू अभे अर्थात अभेद है, तेरा भेद पाना मुमकिन नहीं है और तुझे कोई जीत भी नहीं सकता। तुझ पर विजय पाना संभव नहीं है। तू सदैव भयमुक्त है। तुझे

किसी का भी डर नहीं है। तू निर्भय स्वरूप है।

आओ! उस ईश्वर के निर्भय स्वरूप पर विचार करने का प्रयास करें। भय कई तरह के होते हैं लेकिन प्रमुख भय है विनाश का। क्योंकि उत्पत्ति के साथ विनाश का भय जुड़ा है, जन्म के साथ मृत्यु जुड़ी हुई है, लेकिन उस निर्भय के भय में जो रहता है वह दुनियावी भय से मुक्त हो जाता है। गुरबाणी में अन्यत्र भी इस भाव की पुष्टि हुई है, यथा:

निरभउ सो सिरि नाही लेखा ॥
आपि अलेखु कुदरति है देखा ॥
आपि अतीतु अजोनी संभउ नानक गुरमति सो पाइआ ॥ *(पन्ना १०४२)*

सारी रचना, चाहे कोई जीव, वनस्पति कितनी भी ताकतवर क्यों न मानी जाती हो, वह भी अकाल पुरख के भय में ही है, यथा:

भै विचि पवणु वहै सदवाउ ॥
भै विचि चलहि लख दरीआउ ॥ (पन्ना ४६४)

यही नहीं:

डरपै धरति अकासु नख्यत्रा सिर ऊपरि अमरु करारा ॥
पउणु पाणी बैसंतरु डरपै डरपै इंद्रु बिचारा ॥
(पन्ना ९९८)

निष्कर्षत: समस्त रचना उसी निर्भय स्वरूप परमात्मा के भय में है।

त्रिमान हैं ॥ निधान हैं ॥ त्रिबरग हैं ॥ असरग हैं ॥३२॥

हे परमात्मा! तीनों लोकों (आकाश, पाताल, मातलोक) में तेरा मान है अर्थात् तीनों लोकों के जीव तेरे ही समक्ष झुकते हैं, तेरा सत्कार करते हैं। तू सब गुणों का खजाना है। हे प्रभु! जगत के तीनों पदार्थ (धर्म, अर्थ तथा काम) जीवों को तुझसे ही प्राप्त होते हैं। तुझे कोई पैदा नहीं कर सकता क्योंकि तू जन्म-रहित है। मूलमंत्र में श्री गुरु नानक देव जी ने (सैभं) शब्द में यही भाव प्रतिपादित किये हैं। सैभं अर्थात् स्वयं से प्रकाशवान। 'महान कोश' में भी 'सैभं' के अर्थ स्वयं से होने वाला अंकित हैं अर्थात् जो किसी से नहीं बना। भाई गुरदास जी के चिंतनानुसार भी उसे स्वयं से प्रकाशवान कहा गया है, यथा:

अकाल मूरति परतखि होइ नाउ अजूनी सैभं भाइआ। *(वार ३९:१)*

अनील हैं ॥ अनादि हैं ॥ अजे हैं ॥ अजादि हैं ॥३३॥

हे वाहिगुरु! तू 'अनील' अर्थात् अनिल, हवा (हवा से अभिप्राय प्राणवायु) है। सारे जीव तेरे सहारे पर जीवित हैं। 'अनादि' से अभिप्राय, तू कब का है, तेरी शुरुआत कब हुई, कोई नहीं जानता। हे प्रभु! तू 'अजे' है अर्थात् तुझे कोई जीत नहीं सकता। तू सबका मूल है तथा स्वतंत्र स्वरूप है। तू किसी के अधीन नहीं है। दुनिया के समस्त जीव किसी न किसी बंधन में हैं, इस कारण वे पराधीन हैं। कोई पराए वश में है तो कोई मन के वश में है अर्थात् कोई दूसरे का गुलाम है तो कोई अपने ही मन का गुलाम है, जैसे कि प्रसिद्ध उक्ति है—*"पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं ॥"* अर्थात पराधीन रहना अत्यंत कष्टदायी होता है। गुलाम व्यक्ति स्वप्न में भी सुख की कल्पना नहीं कर सकता। एक ईश्वर ही है जो किसी के अधीन नहीं इसलिए उसे सुखों का सागर कहा जाता है।

अजनम हैं ॥ अबरन हैं ॥ अभूत हैं ॥ अभरन हैं ॥३४॥

हे ईश्वर! तू अजन्मा है अर्थात् तू जन्म से रहित है। तेरी कोई विशेष जाति नहीं है क्योंकि तू अवर्ण है। मुख्य चार वर्ण माने गए हैं— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। तू इन

(शेष पृष्ठ ६४ पर)

विस्मादी वृत्तांत-१३

सीलखान कन्या इक होवै

*-डॉ. अमृत कौर**

"दौलत गुजरान, औरत ईमान और पुत्र निशान" कहने वाले मीरी-पीरी के मालक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के घर में खुशियां मनाई जा रही हैं। आनंद का वातावरण है, चारों तरफ उल्लास छाया है। गुरु जी की सुपत्नी माता दमोदरी जी के पांव पृथ्वी पर नहीं टिक रहे। उनके घर चांद सा बेटा हुआ है। नाम रखा है 'गुरदित्ता', प्रभु द्वारा वरदान-स्वरूप दिया गया प्रसाद। गुरु जी की माता, माता गंगा जी खुशी से फूली नहीं समा रहीं। वे बताशे बांट रही हैं, मिठाइयां बांट रही हैं, जश्न मना रही हैं, गरीबों को खुले हाथों से दान दे रही हैं। उन्होंने अपने सपुत्र को आशीर्वाद दिया, "जोड़ी रले!" गुरु जी हंस पड़े, एक निर्मल स्वच्छ हंसी, "मां अगर वर ही देना है तो यह वर दीजिए:

सीलखान कन्या इक होवै।
पुत्री बिनु जगु ग्रिहसति विगोवै।" . . . ॥१०६५॥
(गु: बि: पा: ६, अध्याय ८)

"मां यदि वर ही देना है तो यह वर दीजिए कि इस घर में एक शीलवती, गुणवती कन्या का जन्म हो जो घर की शोभा बने! कन्या के बिना घर, घर नहीं, उसकी शोभा नहीं। बेटी तो घर का श्रृंगार है। बेटी के बिना तो घर में रौनक नहीं। अपने दिल में तो हंसती-खेलती, घर की शोभा को चार चांद लगाने वाली एक कन्या की तमन्ना है।" गुरु जी की आंखें एक सुखदायी कल्पना में मुंद सी गईं जब उनका घर-आंगन एक सुन्दर-सलोनी बेटी की किलकारियों से गूंज उठेगा, जब बेटी प्राप्त कर उनका आंगन खुशियों से महक उठेगा; जब बीबी भानी जी जैसी सेवा और प्यार की साकार प्रतिमा बेटी पाकर उनके मन की सम्पूर्ण इच्छाएं पूर्ण होंगी। उसके भरण-पोषण, प्यार-दुलार में वे कोई कमी नहीं रहने देंगे। स्त्री तो निर्माता है जीवन-दान देने वाली। एक सीलखान कन्या के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करने में वे प्रत्येक संभव प्रयास करेंगे:

जितु मुखि सदा सालाहीऐ भागा रती चारि ॥
नानक ते मुख ऊजले तितु सचै दरबारि ॥
(पन्ना ४७३)

और उनकी यह तीव्र इच्छा जल्द ही पूर्ण हुई। चांद जैसी लड़की प्राप्त कर उनके आनन्द की कोई सीमा न रही। लोग तो लड़के के जन्म पर लड्डू बांटते हैं उन्होंने कन्या के जन्म पर जी भर कर दान दिया, मिठाइयां बांटीं। उनके पांव जमीन पर नहीं टिकते थे। बिटिया का नाम रखा गया 'वीरो'। धीरे-धीरे बेटी बड़ी होने लगी। उसकी किलकारियों से घर गूंजने लगा। उनका आदेश था कि इसको नित्य नए कपड़े पहना कर, सजा-संवार कर रखा जाए और जब भी वे घर आते, वीरो भाग कर अपनी नन्हीं-नन्हीं बाहें उनके गले में डाल देती; उनके साथ लिपट जाती। वे उसको उठा कर खूब प्यार करते। यह नन्हीं सी बालिका तो उनके हृदय का टुकड़ा थी, उनकी आत्मा का विस्तार। बच्ची को गोदी में लेकर गुरु जी खाना खाते और उसे भी खिलाते। यह बच्ची उनकी आंखों का नूर थी, घर का उजाला। पुत्र यदि निशान है, घर का चिराग है, वारिस है,

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, ज़ीरकपुर-१४०५०३*

बांहों का सहारा है, तो पुत्री दिल का टुकड़ा है, घर का शृंगार है, घर की रौनक है। बेटी के बिना घर, घर नहीं। बेटी तो घर की आत्मा है। वे उसको कहानियां सुनाते, बहादुरी की गाथाएं सुनाते, अपने पूर्वजों की, ऐतिहासिक बहादुर स्त्रियों की कहानियां सुनाते और वह सुनते-सुनते उनकी गोद में ही सो जाती। वह मां की प्यारी लाडली बेटी थी पर पिता के असीम प्यार पर वह न्योछावर हो जाती और अपने को भाग्यशाली समझती। बड़ी होने पर उसकी पढ़ाई का विशेष प्रबन्ध किया गया, बाणी की शिक्षा प्रदान की गई। उसकी शिक्षा के लिए उपयोग हुई हस्तलिखित पोथी आज भी कीरतपुर साहिब के गुरुद्वारे में सुरक्षित है। उसके हाथों का कढ़ाई किया रुमाल और बनाया हुआ सुन्दर पंखा आज भी वहां सुरक्षित है।

गुरु जी को सभी बच्चियों के चेहरों में उनकी बेटी वीरो के चेहरे की झलक दिखाई देती। सम्पूर्ण स्त्री जाति के लिए उनका प्यार, सत्कार उमड़ता। बीबी कौलां जी, एक अनाथ मुस्लिम लड़की को बेटी की तरह पाल कर उसकी याद में कौलसर का सरोवर बना कर उसको सदा के लिए अमर कर दिया।

आज उनके प्यारे बेटे (गुरु) तेग बहादर जी की शादी है। उनके घर शहनाइयां बज रही हैं। मिठाइयां बांटी जा रही हैं, लड़कियां नाच रही हैं-*"वीरा जे तू चढ़ियों घोड़ी, तेरे नाल भरावां जोड़ी।"* गुरु जी का चेहरा खुशी से चमक रहा है। आज उनके प्यारे बेटे (गुरु) तेग बहादर जी की शादी भाई लाल चंद की बेटी बीबी गुजरी जी से हो रही है। बहुत शोभा और प्रशंसा सुनी है कि बीबी गुजरी जी गुणों की खान हैं, रूपवती और गुणवंती हैं। शादी की रस्में गुरमति अनुसार पूर्ण हुईं। विदाई के समय भाई लाल चंद की आंखें डबडबा गईं। उन्होंने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, "गुरु जी! हम गरीब साधारण व्यक्ति हैं, आप शहंशाहों के शाह, आपकी और हमारी क्या बराबरी? आपका और हमारा क्या मुकाबला? हम तो कुछ भी दान-दहेज नहीं दे सके। जो थोड़ा बहुत बन सका है भेंटा समझ कर स्वीकार कर लीजिए!" उनकी इस बात को सुनकर जो गुरु जी ने उत्तर दिया "भाई लाल चंद जी! आपने तो सब कुछ दे दिया। जिन्होंने लड़की दे दी उसने बाकी बचा कर क्या रख लिया? गुजरी जैसी गुणवंती, शीलवंती कन्या के पिता हो मुझे तो इस प्यारी बेटी गुजरी में से अपनी बेटी वीरो का चेहरा दिखाई दे रहा है। यह हमारी बहू नहीं बेटी बन कर हमारे घर रहेगी। आप घबराइए नहीं! इसको किसी प्रकार का अभाव यहां नहीं होगा।" वह आधुनिक युग में दान-दहेज मांगने वालों के मुख पर करारी चोट है। और उन्होंने आगे बढ़ कर बीबी गुजरी के सिर को सहलाया और आशीर्वाद दिया। इस प्यार-स्पर्श में अथाह पित्र प्यार तो था ही साथ-साथ आलौकिकता का दैवी अंश भी था जिससे उसके रोम-रोम में दैवी आनन्द का संचार हुआ। वह उनके चरणों में झुकी, चरणों में शीश झुकाया और उनके चरणों की धूल मस्तक पर लगाई। ऐसे महान पिता की बहू बनना एक बहुत बड़ा सौभाग्य था। बीबी गुजरी जी ने प्रण किया मन ही मन में कि "हे प्रभु! मुझे बल दो, मैं इस घर की सेवा, सम्मान के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर सकूं।"

यह पारस्परिक प्यार और सम्मान रंग लाया। उसकी सास, माता नानकी जी उस पर न्यौछावर जाते। अथाह प्यार और सत्कार प्राप्त कर उसकी कायाकल्प हो गई। वे प्यार और सेवा की साकार मूर्ति बन गईं। श्री गुरु तेग बहादर जी जैसा पति, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जैसा पिता-ससुर और माता नानकी जैसी सास-मां प्राप्त करना उनका सौभाग्य बन गया। वे दिन-रात उनकी सेवा में व्यस्त रहतीं। उनको

गुरु-घर की सेवा करके असीम आनन्द की अनुभूति होती। इस सेवा और तपस्या ने उसके व्यक्तित्व को और भी अधिक निखार और संवार दिया।

समय आने पर वे मां बनीं। बाल गोबिंद राय के नूरानी मुखड़े ने उनको विश्वास दिला दिया कि वे एक साधारण बालक नहीं। वे अपने आप को खुशकिस्मत समझतीं और इन बहुमूल्य वरदानों के लिए प्रभु का धन्यवाद करतीं। वे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी जैसे महान योद्धा मीरी-पीरी के स्वामी की बहू, श्री गुरु तेग बहादर जैसे महान अनुभवी पति की पत्नी और अब बाल गोबिंद राय जैसे तेजस्वी बालक की मां थीं। बाल गोबिंद राय जी के जन्म के समय श्री गुरु तेग बहादर जी आसाम में थे। बाल गोबिंद राय लगभग चार वर्ष के थे जब वे आसाम से वापिस लौटे। इस दौरान माता गुजरी जी ने उन्हें घरेलू कार्य-कलापों से मुक्त रखा। आपने बाल गोबिंद राय जी का, पूर्वजों की शौर्यपूर्ण गाथाएं सुना-सुना कर पालन-पोषण अत्यंत सुचारू रूप से किया। उन्हें युग-प्रवर्तक महान योद्धा बनाने में भरपूर हिस्सा डाला, तभी तो नौ साल के नन्हें बाल गोबिंद राय अपने पिता को देश, धर्म की रक्षा के लिए शहीद होने की बात कह सके। गुरु जी के शहीदी देने जाते समय बीबी गुजरी जी ने बहादुरी और धैर्य से काम लिया और विदाई के क्षणों का बिना विचलित हुए सामना किया और कहा, "हे वाहिगुरु! मुझे शक्ति प्रदान करो कि मैं इस विदाई की घड़ी का बहादुरी से सामना कर सकूं। मैं उनकी कमजोरी नहीं, शक्ति बनूं और अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकूं।" और उसने अपने आसुंओं को पी लिया और शान्ति से कहा अपने पतिदेव को, "मेरे सरताज, मेरे स्वामी! समय ने आपको चुनौती दी है। हे प्रभु! मेरी सहायता करना। मेरे स्वामी! आपका कर्त्तव्य है, आप जाइए और बहादुरी से अपना बलिदान देकर भारत की सुप्त आत्मा को जागृत कीजिए। बाल गोबिंद राय की ओर से निश्चिंत रहें। आप सदैव मेरे अंग-संग रहेंगे। आपके पद-चिन्हों पर चल कर मैं इसे इतना बलवान और शक्तिशाली बना दूंगी कि यह जालिमों के जुल्म का मुंह तोड़ देगा।"

माता गुजरी जी प्रसन्न थे कि उन्होंने बालक का सही पालन-पोषण करके, बढ़िया मार्ग-निर्देशन देकर अपना उत्तरदायित्व अत्यन्त सफलता से निभाया था।

प्रभु की कृपा-दृष्टि से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के घर बारी-बारी से चार साहिबजादों ने जन्म लिया। उन्हें दादी-मां बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनकी प्रसन्नता की सीमा न थी। प्राणों से भी प्यारे इन छोटे-छोटे बालकों की किलकारियों से घर गूंजने लगा। परन्तु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन कोई फूलों की सेज नहीं था। आनन्दपुर साहिब का किला छोड़ते समय माता गुजरी जी अपने नन्हें दो पोतों के साथ शेष परिवार से अलग हो गए और सरहिंद के ठंडे बुर्ज में अपने पोतों के साथ कैद हो गईं। साहिबजादा जोरावर सिंघ और साहिबजादा फतह सिंघ कोमल फूलों जैसे बाल। सरहिंद के नवाब वजीर खां ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नन्हें बालकों को अपने दरबार में बुलाया है। उन्हें लगा कि यह बुलावा केवल बुलावा नहीं। किसी भावी आशंका से उनका कलेजा मुट्ठी में आ गया। उन्होंने बच्चों को समझाते हुए कहा, "मेरे लाल! मुझे लगता है तुमको बहुत कठिनाइयों के रूबरू होना पड़ेगा। वैरी आपको सिखी से विचलित करने के लिए बहुत कुछ करेंगे। तुमने किसी भी सूरत में दिल को डोलने-डगमगाने नहीं देना, ठीक उसी प्रकार जैसे तुम्हारे दादा श्री गुरु तेग बहादर जी ने दिल्ली के चांदनी चौंक में शीश बलिदान कर शहीदी प्राप्त की।

उनके सम्मुख उनके साथियों—भाई दयाला जी को खौलते पानी की देग में उबाल कर शहीद कर दिया गया। भाई मतीदास जी को आरे से चीरा गया और भाई सतीदास जी को रूई में लपेट कर जिन्दा जला दिया गया। तुम उस गुरु अरजन देव जी के वारिस हो जिन्होंने निरन्तर तीन दिन जलती भट्ठी पर रखे गर्म तवे पर बैठ कर शहीदी प्राप्त की। तुम गुरु गोबिंद सिंघ जी के शेर बालक हो। तुमने हंसते-हंसते अपने धर्म पर प्राणों को न्यौछावर कर देना परन्तु अपने पिता, दादा-पड़दादा के नाम को धब्बा मत लगाना!"

माता गुजरी जी की सभी पूर्वकल्पनाएं सही सिद्ध हुईं। बच्चों को इस्लाम कबूल करने के लिए अनेक प्रकार के लालच दिए गए। परन्तु जब उन्होंने किसी प्रकार भी उनका कहना नहीं माना तो उन्हें एक दिन का सोचने का समय दिया गया और साथ ही धमकी दी गई कि यदि उन्होंने दीन कबूल नहीं किया तो उन्हें दीवार में जिन्दा चिन दिया जाएगा।

घने अंधेरे का संदेश लेकर दूसरा दिन भी आ गया। माता गुजरी जी ने अपने कलेजे के टुकड़ों को गले से लगाया, मस्तक को चूमा, केसरी वस्त्र धारण करवाए, कलगी सजाई। उनको पूर्णत: सुसज्जित कर भेजा और बच्चों को आशीर्वाद देते हुए कहा, "तुम गुरु गोबिंद सिंघ जी के बेटे हो! हिमालय पर्वत की भांति अडोल रहना! ये शीश किसी सूरतेहाल में भी नहीं झुकें! शीश दे देना पर धर्म नहीं छोड़ना!" साहिबजादे वजीर खां के दरबार की ओर हंसते-खिलखिलाते हाथों में हाथ डाले, मानो मैदाने-जंग को जीतने जा रहे हों, 'सति श्री अकाल' के जयकारे गुंजाते हुए, शेर के बच्चे शेर की चाल चल रहे थे, वीरता और निडरता की साकार मूर्ति। मुख पर डर और सहम का नामो-निशान तक नहीं था। कल वाली बात फिर दुहराई गई—मौत या इस्लाम। लोभ, लालच, तसीहे देकर प्रेरित करने का हर प्रयत्न किया गया। परन्तु दादी-मां की शिक्षा के फलस्वरूप लालच और धमकियों का उन पर कोई प्रभाव न पड़ा। दीवार बननी प्रारम्भ हो गई। बच्चों को बीच दीवार खड़ा कर दिया गया। एक-एक ईंट रखी जा रही थी। कारीगर का हाथ कांप रहा था। परन्तु बच्चों के मुख पर शान्ति थी। उनके भोले-भाले मुखड़े किसी दैवी नूर से चमक रहे थे। अत्याचार ने सीमाओं का उल्लंघन किया। फूलों जैसे कोमल मुख वाले बच्चे बेदर्दों ने शहीद कर दिये। चारों ओर हाहाकार मच गई, त्राहि-त्राहि होने लगी। बिजली कड़की, बादल गरजे, धरती कांप उठी, अंबर फूट-फूट कर रोया, पक्षी सहम कर चहचहाना भूल गए, वायु पथरा गई। कौन सी आंख थी जो नम नहीं हुई या फूट-फूट कर नहीं रोई? बच्चों को दृढ़ता से धर्म पर कायम रहने में मुख्य प्रेरणा उनकी दादी मां की ही थी। दादी मां अपने जिगर के टुकड़ों की शहीदी का समाचार पाकर परलोक सिधार गईं। यूं माता गुजरी जी का नाम भी अनगिणत सिख शहीदों में शामिल है।

आज भी सरहिंद की ईंट-ईंट इस बेमिसाल शहीदी की दासतां बयां कर रही है:

सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

और धर्म के लिए पुर्जा-पुर्जा कट मरने की प्रेरणा दी थी माता गुजरी जी ने, जिन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के इस वचन को चरितार्थ कर दिया था, "सीलखान कन्या इक होवै।" जिन्होंने सचमुच सीलखान कन्या बन कर अपने महान व्यक्तित्व के द्वारा सिख इतिहास के पन्नों पर अपनी अमिट छाप अंकित कर दी थी।

■

दशमेश पिता जी के ५२ दरबारी कवि-७

दयालु एवं परोपकारी व्यक्तित्व : कवि आसा सिंघ मुतसद्दी

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

पाउंटा साहिब और आनंदपुर साहिब में रहते हुए दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने ५२ दरबारी कवियों एवं विद्वानों से बहुत सारा साहित्य लिखवाया था। इस साहित्य-भंडार में कविगणों की अपनी मौलिक रचनाएं तो थी हीं, साथ ही अनेक अनूदित ग्रंथ भी शामिल थे। रामायण, महाभारत, उपनिषद् आदि अनेक सांस्कृतिक-धार्मिक ग्रंथों का गुरु जी ने संस्कृत से जनभाषा में अनुवाद करवाया था। इतना बड़ा साहित्य का यह जखीरा सन् १७०४ ई में हुए आनंदपुर साहिब के युद्ध में नष्ट हो गया। दिसंबर में जब गुरु जी नगर छोड़कर चले तो बहुत सारे साहित्य ग्रंथ साथ लेकर चले परंतु सरसा नदी के किनारे हुई झड़प में कई ग्रंथ नदी में बह गये। जो पीछे आनंदपुर साहिब में रह गये थे उन्हें युद्ध के बाद मुगलों और पहाड़ी राजाओं की सेनाओं ने नष्ट कर दिया। इस तरह इतना बड़ा साहित्य-भंडार जो पंजाब के साहित्य-इतिहास को बदल कर रख देता, नष्ट हो गया। जो थोड़ा-बहुत बचा वही आज उपलब्ध हो पाता है।

इस विनाश-लीला में जिन कवियों का समस्त काव्य नष्ट हो गया उनमें से एक हैं भाई आसा सिंघ। भाई आसा सिंघ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबार में 'मुतसद्दी' यानी 'मुनीम' का कार्य करते थे, इसलिए आपका नाम 'आसा सिंघ मुतसद्दी' करके मशहूर हुआ।

भाई आसा सिंघ के जीवन, जन्म आदि के बारे में कोई भी जानकारी प्राप्त नहीं होती। सिख ऐतिहासिक स्रोतों में आपके बारे में मात्र एक प्रसंग मिलता है जो भाई कान्ह सिंघ नाभा ने 'महान् कोश' में उद्धृत किया है। कहते हैं कि एक बार एक गरीब सिख आपके पास आया और अर्ज की कि उसकी लड़की जवान है, शादी करनी है, सो धन आदि देकर सहायता कर दें। भाई आसा सिंघ मुतसद्दी ने बिना गुरु जी से आज्ञा लिए सिख को ५०० रुपये की हुंडी लिख दी थी। उस गरीब सिख ने वह हुंडी एक अमीर सिख को देकर बदले में ५०० रुपये लेकर बेटी की शादी कर ली। वह हुंडी जब बाद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पास भुगतान के लिए पेश हुई तो गुरु जी को आश्चर्य हुआ। भाई आसा सिंघ शर्मिन्दा होकर गुरु जी के बुलाने से पहले ही दरबार से उठ कर चले गये। घर आकर विचार किया कि गुरु जी को सारी सच्चाई स्वयं बता देनी चाहिए। आपने गुरु जी को दो दोहे लिख कर भेजे-

मुख कारा मेरो करै करत न पर उपकार।
तिस को मै फिर करौंगी पलटा इस दरबार।
छाती फट दो टुक भई रुदन करन लिखजात।
पर सुआरथ उपकार बिन मुझे न सुपने शांत।

अर्थात जो कलम का मुंह काला करके उपकार नहीं करते, कलम उनका मुंह काला करेगी और परोपकार किये बिना मुझे सपने में भी शांति नहीं मिलती। दशम पिता ने खत पढ़ कर भाई आसा सिंघ को क्षमा कर दिया।

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)-१४११०१*

भाई आसा सिंघ मुतसद्दी के इन दो दोहों में उनके काव्यत्व और व्यक्तित्व की सुंदर झलक मिलती है। ब्रज भाषा में सुंदर दोहे रचने वाले भाई आसा सिंघ बहुत दयालु और परोपकारी प्रवृति के इंसान थे। यह प्रसंग और दो दोहे उन्हें हमेशा के लिए अमर कर गये हैं।

■

कवि सेनापति : अतिरिक्त जानकारी

'गुरमति ज्ञान' अक्तूबर २००७, पृष्ठ ४५ पर 'गुरु शोभा' के रचियता कवि सेनापति के संदर्भ में डॉ. राजेंद्र सिंघ जी का लघु लेख प्रशंसनीय है। इस लेख के अंतर्गत एक बात और जोड़ने को जी चाहता है जिसका आधार 'हिंदी साहित्य का इतिहास'—रामचंद्र शुक्ल, हमारे कवि और लेखक—डॉ. राजेश्वर चतुर्वेदी, पृष्ठ १३९ के अंतर्गत ज्ञात हुआ।

सेनापति जी का जन्म संवत् १६४६ को हुआ माना जाता है। सेनापति उनका उपनाम ही था। उन्होंने 'कबित्त रत्नाकर' ग्रंथ में अपने वंश का परिचय दिया है, जो इस प्रकार है–

दीक्षित परसुराम दादौ है बिदित नाम,
जिन कीन्हैं जज्ञ जाकी, विपुल बढ़ाई है।
गंगाधर पिता, गंगाधर के समान जाके,
गंगातीर बसति, अनूप जिन पाई है।
महा जान मनि, विद्यादान हूं मैं चिंतामणि,
हीरामन दीक्षित ते, पाई पंडिताई है।
सेनापति सोई, सीतापति के प्रसाद जाकी,
सब कवि कान दै, सुनत कविताई है।

स्पष्ट है कि उन्होंने अपने पिता गंगाधर, पितामह परशुराम दीक्षित, गुरु हीरा लाल दीक्षित से विद्याध्ययन किया। अनूप शहर के निवासी। वृंदावन में सन्यास लेकर आयु व्यतीत की।

सेनापति चाहत है सकल जनम मरि,
वृंदावन सीमा तै न बाहरि निकसिबौ।
राधा-मन-रंजन की, सोभा नैन कंजन की,
माल गरै गुंजन की, कुंजन को बसिबौ।

कवि सगुणोपासक थे। उन्होंने विभिन्न अवतारों का वर्णन किया है। रामायण वर्णन में प्रबन्ध पटुता है। विशेष प्रसंगों का वर्णन है। परशुराम का प्रचंड रूप चित्रित है। उनका ऋतु वर्णन हिन्दी साहित्य में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। प्रकृति का स्वच्छंद वर्णन अद्भुत है, यथा–

खंड खंड सब दिग्, मंडल जलद सेत,
सेनापति मानौं सृंग, फटिक पहार के।
अंबर अडंबर सौ, उमड़ि-घुमड़ि छिन,
छिछकै छछारे छिति, अधिक उछार के।
सजिल सहल मानौं, सुधा के महल-नभ,
तूल के पहल किधौं, पवन अधार के।
पूरब कौं भासत हैं, रजत से राजत है,
गग गग गाजत गगन, छन क्वार के।

इस प्रकार सेनापति जी की भाषा ब्रज है। ओज, माधुर्य व प्रसाद गुण है। अनुप्रास, यमक, रूपक, उत्प्रेक्षा, प्रतीष, व्यतिरेक अलंकारों का सुंदर प्रयोग हुआ है। छंद विधान की दृष्टि से कबित्त, छप्पय, दोहा प्रधान रूप से प्रयोग हुये हैं। मूलत: सेनापति जी कबित्त छंद के लिये विख्यात हैं। उनका ग्रंथ 'कबित्त रत्नाकर' पांच तरंगों में है–

प्रथम — श्लेष वर्णन ९७ छंद हैं।
द्वितीय — श्रृंगार वर्णन ७४ छंद हैं।
तृतीय — ऋतु वर्णन ६२ छंद हैं।
चतुर्थ — रामायण वर्णन ७६ छंद हैं।

पंचम — भक्ति वर्णन ८६ छंद हैं।

कुल ३८४ छंद हैं। शेष का पुनरावर्तन हुआ है।

'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—डॉ. नागेन्द्र, पृष्ठ २०६ पर भी कवि सेनापति जी का संक्षिप्त उल्लेख मिलता है।

कवि सेनापति ने 'कवि रत्नाकर' के अतिरिक्त एक और ग्रंथ की रचना की थी जो 'काव्य कल्पद्रुम' है, लेकिन दूसरे ग्रंथ का कुछ पता नहीं चलता। अत: 'कबित्त रत्नाकर' एवं 'गुरु शोभा' (सिख इहितास के अंतर्गत) दो ग्रंथ उपलब्ध हैं।

-डॉ. शांतिलाल सिणोजिया,
व्याख्याता, ए. वी. डी. एस. महाविद्यालय,
पो. जामजोधपुर,
जिला जामनगर (गुजरात)।
मो. ०९८९८८ ९०१४७

कविता

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी

श्री गुरु तेग बहादर के घर,
मां गुजरी की कोख से,
था एक अद्भुत प्रकाश हुआ।
और परम सुख का आभास हुआ।
पाटलीपुत्र है प्राचीन नगर।
अध्यात्म और सभ्यता का घर।
पटना अब इस नगर को कहते।
इतिहास देखे इसने बनते।
बुद्ध और बाबा नानक यहां आये।
प्रकाश धर्म का थे वे लाये।
इस अति पावन-पवित्र नगर में,
पौष मास और शुभ लगन में,
विलक्षण बाल ने अवतार लिया।
और 'गोबिंद' नाम धारण किया।
था सूर्य नया इक उदय हुआ।
हर ओर प्रकाश था दिव्य हुआ।
भीखम शाह पीर ने देखा।
माथा पूर्व दिशा में टेका।
हर शिष्य आश्चर्यचकित हुआ।
क्यों न सजदा पश्चिम में किया?
पीर ने कहा, नूर अल्लाह का,
जहां भी चाहे प्रकट हो सकता।
वह पूर्व में अब प्रकट हुआ है।
सजदा तभी उस ओर हुआ है।
न होगा वह हिंदू न मुसलमान।
होगा वह सच्चा नेक इंसान।
रक्षा करेगा मानव के सम्मान की।
निज धर्म पर स्वाभिमान की।
पटना के पत्थर-दिल सूबेदार को,
दु:स्वप्न था आया।
पहले एक क्रुद्ध सिंह ने,
और फिर एक मगरमच्छ ने,
उसको था डराया।
पसीने इसके भय से छूटे,
था वह बहुत घबराया।
अर्थ समझने दु:स्वप्न का,
पीरों को था बुलाया।
उन सबने सोच-समझ कर,
था उसे बतलाया।
पटना में गुरु गोबिंद सिंघ प्रकटे,
विरुद्ध जुल्म के जो लड़ेंगे,
और जुल्म का अंत करेंगे।

-प्रो. महेन्द्र जोशी, ३०-ए, गोपाल नगर, अमृतसर-१४३००१



शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी सिख मसलों के हल के लिए प्रयत्नशील

चंडीगढ़ : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने विदेश में रह रहे व विदेश जाने वाले सिखों को पांच ककारों के कारण आने वाली परेशानियों के पक्के हल के लिए अनिवासी धार्मिक सलाहकार कमेटी के गठन का निर्णय लिया है। चंडीगढ़ में आयोजित प्रवासी सिखों की एक बैठक के बाद पत्रकारों को संबोधित करते हुए शि: गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि पिछले कुछ समय में विदेशों में बसे सिखों को धार्मिक तौर पर पेश आ रही मुश्किलों के प्रति शि: गु: प्र: कमेटी गंभीर है और पगड़ी पहनने तथा पांच ककारों की पालना करने जैसे विषयों को लेकर हर स्तर पर सिखों के धार्मिक अधिकारों के संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध है। उन्होंने कहा कि फ्रांस के अलावा हॉलैंड और बेल्जियम में भी सिखों को पगड़ी पहनने से रोके जाने की शिकायतें मिली हैं और कुछ देशों में सिखों को ककारों की पालना से रोके जाने के मामले भी सामने आए हैं।

कुछ दिन पहले हाईकोर्ट की ओर से पंजाब में सिखों को अल्पसंख्यक न माने जाने संबंधी फैसले पर सर्वोच्च न्यायालय में अपील किए जाने के मुद्दे पर उन्होंने कहा कि शिरोमणि कमेटी देश भर में सिखों की संख्या के अनुपात के आधार पर उनके लिए अल्पसंख्यक दर्जा मांगेगी। इस मुद्दे को राज्यों के आधार पर नहीं लिया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि सिखों के इतिहास से संबंधित स्मारक बनाने की दिशा में शि: गु: प्र: कमेटी जल्दी ही मालेरकोटला के कुप्प रुहीड़ा स्थान पर बड़े घल्लूघारे का स्मारक बनाने जा रही है। ५ फरवरी, १७६२ को घटी इस घटना में करीब ३५ हजार सिख पुरुषों और महिलाओं ने शहीदी दी थी। इसके अलावा हरियाणा और हिमाचल प्रदेश की सीमा पर स्थित किला लोहगढ़ (मुखलिसगढ़) में बाबा बंदा सिंघ बहादुर की याद में स्मारक बनाए जाएंगे।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने बताया कि विदेशों में सिख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए प्रवासी सिखों की एक धार्मिक सलाहकार समिति गठित किए जाने का फैसला लिया गया है। यह समिति विदेशों में सिखों के धार्मिक मामलों से शिरोमणि कमेटी को अवगत कराएगी।

शि: गु: प्र: कमेटी के तत्वावधान में फतेहगढ़ साहिब में बनाई जा रही श्री गुरु ग्रंथ साहिब वर्ल्ड यूनिवर्सिटी के विषय में बात करते हुए उन्होंने कहा कि यूनिवर्सिटी एक्ट बनाया जा रहा है। इस मौके पर शिरोमणि कमेटी के महासचिव स. सुखदेव सिंघ भौर ने कहा कि एक्ट के मुताबिक ही यूनिवर्सिटी को संचालित किया जाएगा और शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष ही यूनिवर्सिटी के चांसलर होंगे।

'८४ के सिख कत्लेआम के दोषियों को सजा दिलाने हेतु सिखों का रोष-प्रदर्शन

नई दिल्ली : नई दिल्ली में स्थित कड़कड़डूमा अदालत के सामने १९८४ के सिख कत्लेआम के दोषियों—जगदीश टाइटलर, कमल नाथ तथा सज्जन कुमार के विरुद्ध आवाज बुलंद करने के

लिए पिछले दिनों एक जोरदर रोष-प्रदर्शन किया गया, जिसमें आल इंडिया सिख स्टूडेंटस फेडरेशन, सिखज़ फॉर जस्टिस, पीड़ित परिवारों के बच्चे, माता गुजरी जी सहारा ट्रस्ट से शहीद परिवारों के बच्चे, सिख स्टूडेंटस फेडरेशन के दोनों दल (महिता तथा गरेवाल), दमदमी टकसाल जत्था भिंडरां, शिरोमणि अकाली दल दिल्ली यूनिट तथा दिल्ली गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी और हजारों की संख्या में सिखों ने भाग लिया। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने शिरोमणि कमेटी के अन्य सदस्यों के साथ रोष-प्रदर्शन की अगुआई करते हुए कहा कि आजादी की लड़ाई में ८५ प्रतिशत से भी अधिक कुर्बानियां करने वाले सिखों को आज आजाद भारत में अन्याय, जब्र-जुल्म तथा बेगानेपन का एहसास करवाया जा रहा है। उन्होंने कहा कि जगदीश टाईटलर जैसे नेताओं के इशारों पर राजधानी दिल्ली में हजारों सिखों का कत्लेआम किया गया। आज २४ वर्ष बीत जाने पर भी किसी दोषी को सजा नहीं दी गई। उन्होंने कहा कि जैसे पिछले समय में राजस्थान के मूसाखेड़ा में सिखों के कातिलों को सजा दिलवा कर शिरोमणि कमेटी द्वारा जो मदद गवाहों की की गई थी वही मदद दिल्ली सिख कत्लेआम के गवाहों की भी की जाएगी। रोष-प्रदर्शन में शामिल हुए स. अवतार सिंघ हित ने कहा के १९८४ में सिखों के कत्लेआम के लिए पूर्वनिर्धारित योजना द्वारा आक्रमण किया गया था। जत्थेदार ओंकार सिंघ (थापर) ने कहा कि यदि इंदिरा गांधी तथा राजीव गांधी के कातिलों को सजा दी जा सकती है तो सिखों के कातिलों को क्यों नहीं? इस रोष-प्रदर्शन में सभी सिख नेताओं ने संबोधित कर भारत सरकार तथा न्याय प्रणाली से दोषियों को तुरंत सजा दिए जाने की मांग की।

१९८४ के सिख कत्लेआम के चश्मदीद सामने आएं

अमृतसर : १९८४ के दिल्ली सिख कत्लेआम में फंसे कांग्रेसी नेताओं को अदालत के कठघरे में पहुंचाने के लिए शिरोमणि कमेटी और भी सक्रिय हो गई है। शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने सिख कत्लेआम के चश्मदीदों को गवाही देने के लिए सामने आने का आह्वान किया है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि इस प्रकार के गवाहों को हर तरह की सहायता उपलब्ध करवाई जाएगी। यह सहायता कानून, सुरक्षा व आर्थिक रूप में प्रत्येक उस गवाह को दी जाएगी जो गवाही के लिए आएगा। सरकारी एजेंसियां इस शर्मनाक कांड में शामिल दोषी नेताओं को बचाने का प्रयास कर रही हैं परंतु सिख पंथ उनके इन मंसूबों को पूरा नहीं होने देगा। देश की सबसे बड़ी जांच एजेंसी सी. बी. आई भी निष्पक्ष जांच करने की बजाय आरोपियों को बचाने के लिए अदालतों को झूठ बोल कर गुमराह कर रही है।

सिख संघर्षों में शामिल सिखों की डायरेक्टरी बनेगी : प्रो. बडूंगर

अमृतसर : शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के पूर्व अध्यक्ष प्रो. कृपाल सिंघ बडूंगर ने कहा कि धर्म युद्ध मोर्चा व अन्य संघर्षों में शामिल सिखों की एक डायरेक्टरी तैयार की जाएगी। सिख

इतिहास रिसर्च बोर्ड द्वारा प्रकाशित की जाने वाली यह डायरेक्टरी एक ऐतिहासिक दस्तावेज साबित होगी। प्रो. बडूंगर शिरोमणि कमेटी परिसर में स्थित गुरु नानक निवास के एकत्रता घर में सिख इतिहास रिसर्च बोर्ड की बैठक को संबोधित कर रहे थे।

उन्होंने कहा कि आज की बैठक में किसी भी पंथक संघर्ष जैसे पंजाबी सूबा मोर्चा, इमरजेंसी मोर्चा व धर्म युद्ध मोर्चा आदि में जिन सिंघ-सिंघनियों ने शहादत का जाम पिया था या जत्थों के रूप में गिरफ्तारियां दी थीं उनकी एक डायरेक्टरी तैयार करने की सेवा सिख इतिहास रिसर्च बोर्ड के स्कालरों से ली जाएगी।

उन्होंने कहा कि किसी भी मोर्चे में शहीद सिंघ-सिंघनियों के वारिस व जिन सिंघ-सिंघनियों ने मोर्चे के समय गिरफ्तारियां दीं, वे अपने दस्तावेजी सबूत शिरोमणि कमेटी के सिख इतिहास रिसर्च बोर्ड, अमृतसर में पहुंचाने का कष्ट करें। इस बैठक में केंद्रीय सिख अजायब घर में लगाई तस्वीरों को ऐतिहासिक घटनाक्रम के अनुसार लगाने व इतिहास को दर्शाते कैपशन भी नए सिरे से स्थापित करने का फैसला किया गया। महाकवि भाई संतोख सिंघ हाल में पुरातन हस्तलिखित गुरबाणी के खरड़ों का म्यूजियम भी स्थापित करने का फैसला लिया गया है। नई पीढ़ी को इतिहास से जोड़े रखने के लिए पुरातन इतिहास को दर्शाती पुस्तकें दोबारा प्रकाशित करने के फैसले के अलावा और कई रुटीन के कार्यों के प्रति विस्तृत विचार-विमर्श किया गया। इस अवसर पर डॉ. दलबीर सिंघ, सचिव स. हरबेअंत सिंघ, उप सचिव स. बलविंदर सिंघ, स. कृपाल सिंघ रीसर्च स्कालर के अलावा सिख इतिहास रीसर्च बोर्ड के अन्य सदस्य तथा बोर्ड की सलाहकार कमेटी के सदस्य उपस्थित थे।

विश्व-शांति का संदेश लाने वाले पहले महापुरुष गुरु नानक साहिब : डॉ लारी

पुणे : यूनेस्को द्वारा प्रायोजित 'वर्ल्ड पीस सेण्टर', एम. आई. टी., पूना में पिछले दिनों आयोजित बारहवें 'संत ज्ञानेश्वर-तुकाराम एन्डाउमेण्ट लेक्चर सीरीज़ २००७' में प्रख्यात इतिहासकार प्रो. डा. लारी आजाद ने 'बाबा नानक का धर्म और विश्व-शांति का संदेश' नामक विषय पर एक विशाल जनसभा को संबोधित किया।

इसके पूर्व इस प्रतिष्ठित व्याख्यानमाला में दलाईलामा, पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम, पूर्व प्रधानमंत्री आई. के. गुजराल तथा चन्द्रशेखर, भैरो सिंह शेखावत आदि बोल चुके हैं। हजारों पूनावासियों से खचाखच भरे विशाल संत ज्ञानेश्वर सभागार में सर्वप्रथम 'विश्व-शांति केन्द्र' की ओर से यूनेस्को पीठाध्यक्ष डॉ. वी. डी. कराड ने डॉ. लारी को सम्मानित किया।

डॉ. लारी आज़ाद ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के मूल उद्धरणों तथा तत्कालीन फारसी-हिन्दी-गुरमुखी स्रोतों के आधार पर अपने व्याख्यान को आधृत करके प्रामाणिक रूप से कहा कि लोग बाबा नानक को एक पृथक धर्म के संस्थापक के रूप में या हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रचारक के रूप में जानते हैं, जबकि बाबा नानक विश्व-शांति के महान संदेशवाहक भी थे। डॉ. लारी ने अपने विद्वतापूर्ण व्याख्यान में सिद्ध किया कि असहिष्णुता और अनुदारता के युग में जबकि भारत बाहरी आक्रमण झेल रहा था, जनता शासक वर्ग से आक्रांत थी उस समय श्री गुरु नानक देव जी ने शान्ति की अमर मशाल जलाई जो आज भी धरती को शांति का संदेश

दे रही है। डॉ. लारी ने कहा कि श्री गुरु नानक देव जी का संपूर्ण जीवन स्वयं शांति का पर्यायवाची है। वे भारत के पहले धर्म-सुधारक थे जो देश की सीमाओं के बाहर श्रीलंका, तिब्बत, मध्य एशिया के सुदूर देशों तक प्रेम और शांति का संदेश लेकर स्वयं गये। काबुल, बगदाद, मदीना, मक्का तक जाकर बाबा नानक ने समस्त मानव जाति को स्वतंत्रता-समानता-भ्रातृत्व की वैश्विक शिक्षा दी जो शांति के मूलाधार हैं। ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर डॉ. लारी ने आगे बताया कि बाबा नानक के एक ईश्वर, मानव जाति की एकता, पाखण्डों के निषेध, प्रेमपूर्ण जीवन पद्धति, 'सरबत्त दा भला' के मंत्र, सेवा के भाव, विवादों से मुक्ति, जीयो और जीने दो के नियम ने नि:संदेह विश्व-शांति को महान संबल प्रदान किया। बाबा नानक के शांति के इस युगान्तकारी संदेश को उनके उत्तराधिकारियों ने इतनी शांतिपूर्वक फैलाया कि आज उनके सिख दुनिया के कोने-कोने में शांति के साथ फलते-फूलते हुए शांति के प्रतीक बने हुए हैं।

एक घण्टे के अभूतपूर्व व्याख्यान को पिनड्रॉप साइलेन्स में सुनने के बाद हज़ारों श्रोताओं ने डॉ. लारी द्वारा 'जयकारा' लगाने के बाद खड़े होकर देर तक करतल ध्वनि से सभागार को गूँज से भर दिया। अनेक विशिष्ठ विद्वानों के प्रश्नों का डॉ. लारी ने उत्तर भी दिया। विश्व-शांति की समवेत प्रार्थना के साथ सभा सम्पन्न हुई।

■

जापु साहिब की विचार व्याख्या *(पृष्ठ ५३ का शेष)*

सबसे न्यारा है। 'अभूत' अर्थात् तेरी रचना पांच तत्वों से नहीं हुई। जल, वायु, अग्नि, धरती तथा आकाश इन पांच तत्वों से जीवों की रचना हुई है। लेकिन हे ईश्वर! तू पांच तत्वों की भौतिक रचना से भी परे है और तेरा भरण-पोषण किसी के अधीन नहीं अर्थात् तू 'अभरन' है अर्थात् पालन-पोषण हेतु किसी की मोहथाजी नहीं। तुझे किसी के आश्रय की आवश्यकता नहीं। तू निराश्रित है।

अगंज हैं ॥ अभंज हैं ॥ अझूझ हैं ॥ अझंझ हैं ॥३५॥

हे निरकांर! तुझ पर कोई विजय पा सके ऐसी किसी की हिम्मत कहां? तू 'अगंज' है अर्थात् तुझे कोई तोड़ नहीं सकता। तेरे साथ कोई टक्कर ले ऐसी किसी की मजाल कहां? तुझे किसी प्रकार के झगड़े-झमेले प्रभावित नहीं कर सकते, तू इन सब विवादों से परे है।

विचारणीय पहलू, इस दुनिया में हर इंसान का किसी न किसी से झगड़ा-झमेला है। कभी अपनों द्वारा विश्वासघात के कारण तो कभी अपने-पराये द्वारा ईर्ष्या या द्वेषवश। एक ईश्वर ही ऐसा है जिसे किसी से कोई सरोकार नहीं, किसी से कोई लेना-देना नहीं। उसका किसी के साथ कोई झमेला नहीं।

■

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसैट प्रैस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ।